शिवस्वरोदय

प्रकाशक
हिन्दी पुस्तकालय, मथुरा।

॥ श्री ॥

शिवस्वरोदयः ।

भाषा टीका सहित

महेश्वरं नमस्कृत्य शैलजां गणनायकम् ।
गुरुं च परमात्मानं भजे संसारतारणम् ॥१॥

देव्युवाच ।

देव देव महादेव कृपां कृत्वा ममोपरि ।
सर्वसिद्धिकरं ज्ञानं कथयस्व मम प्रभो ॥२॥
कथं ब्रह्माण्डमुत्पन्नं कथं वा परिवर्तते ।
कथं विलीयते देव वद ब्रह्माण्डनिर्णयम् ॥३॥

मैं महादेव, पार्वती, गणेश, गुरु और संसारसे पार करने वाले परमात्मा को भजता हूँ । पार्वती शिवजीसे कहती हैं कि हे प्रभो ! कृपा करके संपूर्ण सिद्धियों के करने वाले ज्ञान को मेरे से कहो । हे देव! यह ब्रह्मांड क्यों कर उत्पन्न होता है । किस प्रकार इसकी पालना होती है और कैसे प्रलय होती है इस ब्रह्मांडके निर्णय को मुझे समझा कर कहो ॥१।३॥

ईश्वर उवाच ।

तत्वद्ब्राह्माण्डमुत्पन्नं तत्वेन परिवर्तते ।
तत्वेविलीयते देवि तत्वाद्ब्राह्माण्डनिर्णय: ॥४
तत्वमेव परंमूलं निश्चितं तत्वयादिभि: ।
तत्वस्वरूपं किं देव तत्वमेव प्रकाशया ॥ ५ ॥
निरंजनो निराकार एको देवो महेश्वर: ।
तस्मादाकाशमुत्पन्नमाकाशाद्वायुसम्भव: ॥६॥
वायोस्तेजस्तत: नीरस्तत: पृथ्वीसमुद्भव: ।
एतानि पंचतत्वानि विस्तीर्णानिचपंचधा ।७।

महादेव बोले—हे देवि ! यह ब्रह्मांड तत्वों से उत्पन्न होता है और तत्वों से ही पालन होता है और तत्वों मे ही लय हो जाता है इससे तत्वो से ही इसका निर्णय समझना चाहिये । पार्वती बोलीं—कि तत्ववादियी ने ब्रह्मांड का मूल तत्व को ही निश्चित किया है इससे हे प्रभो ! तत्व का स्वरूप क्या है ? सो मेरे प्रति आप प्रगट करें । महादेव जी बोले कि माया से रहित, निराकार केवल परमेश्वर है उससे आकाश पैदा हुआ और आकाश से वायु उत्पन्न हुआ । वायु से तेज, तेज से जल और जल से पृथ्वी हुई । ये पाँचों तत्व एक दूसरे के प्रति पांच प्रकार से विस्तार को प्राप्त होते हैं अर्थात्

पंचीकरण करने से पच्चीस तत्व होते हैं ।।४।७।।

तेभ्यो ब्रह्माण्डमुत्पन्नं यैरेव परिवर्तते ।
विलीयते च तत्रैव रमते पुनः ।। ८ ।।
पंचतत्वमये देहे पंचतत्वानि सुन्दरि ।
सूक्ष्म रूपेण वर्तन्ते ज्ञायन्ते तत्वयोगिभिः ।६।
अथ स्वरं संप्रवक्ष्यामि शरीरस्थस्वरोदयम् ।
इयंस्वरज्ञानेय भवेज्ज्ञानं त्रिकालजम् । १० ।
गुह्याद्गुह्यतरं सारमुपकारप्रकाशनम् ।
इदं स्वरोदय ज्ञानं ज्ञानान मतकेमणिः।।११।।

इनसे हीं ब्रह्मांड उत्पन्न होता है और इन्ही से जगत पालना होती है और इन्हीं में लीन होकर सूक्ष्म-रूप को प्राप्त होता है । हे सुन्दरि ! यह शरीर जो पांच तत्वों से बना है पांचों तत्व हम में सूक्ष्मरूप से विद्यमान रहते हैं । उनको तत्वों के ज्ञाता जो योगी जन हैं जानते हैं । शरीर स ही स्वरों की उत्पत्ति है जिससे ऐसे जो आकार आदि स्वर हैं उनको कहता हूँ जिसके ज्ञान से भूत भविष्य वर्नमान तीनों कालों का ज्ञान होता है । यह स्वरोदय ज्ञान जितना गोप्य है, यह गुप्त सार उपकारों का प्रकाशक है और सब ज्ञान का शिरोमणि है ।।८।११।।

सूक्ष्मात्सूक्ष्मतरं ज्ञानं सुबोधं सत्यप्रत्ययम् ।
आश्चर्यं नास्तिकेलोकेआधरंत्वास्तिकेजने।१२
शान्ते शुद्धे सदाचारे गुरुभक्त्यैकमानसे ।
दृढ़चित्ते कृतज्ञे च चैव ज्ञानस्वरोदयम् ॥१३॥
दुष्टे च दुर्जने क्रुद्धे नास्तिके गुरुतल्पगे ।
हीनसत्वे दुराचारे स्वरज्ञानं न दीयते ॥१४॥

यह स्वरोदय ज्ञान अच्छी तरह जानने योग्यहै जो जन नास्तिकहैंउनको आश्चर्य दीखताहै औरजो आस्तिक हैं उनका यह आधार है । शांतस्वभाव, शुद्ध, उत्तम आचरणवाला,गुरुभक्तिमें जिसका मन और चित्त दृढ़हो किये हुए उपकारो का ज्ञाता ऐसे शिष्य को स्वरोदय ज्ञान देना चाहिये । जो दुष्ट, दुर्जन, क्रोधी,नास्तिक,गुरु स्त्रीगामी, अधीर और बुरे आचरण वाला हो उसको स्वर ज्ञान नहीं देना चाहिये ॥१२-१४॥

शृणुत्वं कथितं देवि देहिस्थं ज्ञानमुत्तमम् ।
येन विज्ञानमात्रेण सर्वज्ञत्वं प्रणीयते ॥१५॥
स्वरे वेदाश्च शास्त्राणि स्वरे गान्धर्वमुत्तमम् ।
स्वरे च सर्वं त्रैलोक्यं स्वरमात्मस्वरूपकम् ।।१६

स्वरहीनश्च दैवज्ञो स्वामिहीनं यथा गृहम् ।
शास्त्रहीनं यथा वक्त्रं शिरोहीनं चयद्वपुः॥१७
नाड़ीभेदं तथा प्राणतत्वभेदं तथैव च ।
सुषुम्नामिश्रभेदं च योजानातिस मुक्तिगः॥१८।

हे देवि! मेरे कहे हुए प्राणो स्थित उत्तम ज्ञानको सुन जिसके ज्ञान मात्र से ही प्राणी सर्वज्ञ हो जाताहै। सम्पूर्ण वेद,शास्त्र और उत्तभ गांधर्व और संपूर्ण तीनों लोक ये सब स्वरमें ही हैं और स्वर ही आत्मस्वरूपहै। स्वर के ज्ञानसे हीन ज्योतिषी और स्वामी के बिनाघर शास्त्र से बिना मुख और स्वर हीन देह शोभाके पात्र नहीं होते । जो मनुष्य नाड़ी प्राणतत्व और सुषुम्ना आदि तीनों नाड़ियों के भेद को जानता है वह मुक्तिको प्राप्त होता है ॥१५।१८॥

साकारे वा निराकारे शुभं वायुबलात्कृतम् ।
कथयन्ति शुभं केचित्स्वरज्ञानं वरानने ॥१९॥
ब्रह्माण्डखण्डपिंडाद्याः स्वरेणैव हि निर्मिता ।
सृष्टिसंहारकर्त्ता च स्वरःसाक्षान्महेश्वरः।२०।
स्वरज्ञानात्परं गुह्यं स्वरज्ञानात्परं धनम् ।

स्वरज्ञानात्परं ज्ञानं नवा दृष्टं नवा श्रुतम्॥२१
शत्रुं हन्यत्स्वरबले तथा मित्रसमागमः।
लक्ष्मीप्राप्तिः स्वरबलेकीर्तिः स्वरबलेसुखम्।२१

साकार (श्वावहारिक) वा निराकार (पारमार्थिक) में वायु (स्वर) के बल से शुभ होता है और पारवती जी ! कोई २ यह कहते हैं कि स्वर के ज्ञान से ही शुभ होता है । ब्रह्मांड और पिंड आदि स्वर के ही रचे हैं, सृष्टि और संहार के कर्त्ता साक्षात महेश्वर ही हैं । स्वर ज्ञानसे परे गुह्य,धनज्ञान देखान सुनाहै अर्थात् सबसे स्वर ज्ञान ही श्रेष्ठ है । स्वर के बल से शत्रु का हनन्त और मित्र का समागम, लक्ष्मी की प्राप्ति, कीर्ति सुख आदि हो प्राप्त होते हैं ॥१६।२२॥

कन्याप्राप्तिः स्वरबले स्वरतो राजदर्शनम्।
स्वरेण देवतासिद्धिःस्वरेण क्षितिपोवशः।२३
स्वरेण गम्यते देशो भोज्यं स्वरबले तथा।
लघु दीर्घं स्वरबले मलं चैव निवारयेत॥२४
सर्वशास्त्रपुराणादि स्मृतिवेदांगपूर्वकम्।
स्वरज्ञानत्परं तत्वं नास्तिकिंचिद्वरानने ॥२५

नामरूपादिकाः सर्वे मिथ्या सर्वेषु विभ्रमः ।
अज्ञानमोहिता मूढा यावत्तत्वं न विद्यते॥२६

कन्या की प्राप्ति विवाह राजा का दर्शन देवता की सिद्धि होती है और राजा भी स्वर से ही बस में होते हैं । स्वर के ही बल से देश प्रमाण लघुशंका मल का त्याग होता है । हे देवि सम्पूर्ण शास्त्र और पुराणादि स्मृति और वेदांग आदि ये सब स्व ज्ञान के अन्तर्गत हैं । जब तक तत्व का ज्ञान नहीं होता तब तक नाम रूप आदि भ्रम मिथ्या है और मूर्खों को मोह भी तब तक ही रहता है ॥२३।२६॥

इदं स्वरोदयं शास्त्रं सर्वशास्त्रोत्तमोत्तमम् ।
आत्मघटप्रकाशार्थं प्रदीपकलिकोपमम् ॥२७
यस्मै कस्मै परस्मै वा न प्रोक्तं प्रश्नहेतवे ।
तस्मादेतत्स्वयंज्ञेयमात्मनोवा??त्मनात्मनि ॥२८
न तिथिर्न च नक्षत्रं न वारो ग्रह देवता ।
न च विष्टर्व्यतीपातो वैधृत्वाद्यास्तथैवच॥२६॥
कुयोयो नास्त्यतो देवि भविता न कदाचन ।
प्राप्ते स्वरबले शुद्धे सर्वमेव शुभं फलम् ॥३०

यह स्वरोदय शास्त्र सम्पूर्ण शास्त्रों में श्रेष्ठ है और

आत्म रूपी घट को प्रकाश करनेमें दीपक कीं ज्योतिके समान है, यह स्वरोदय प्रश्न करने से हर किसीसे नहीं कहना चाहिये वल्कि अपने लियेही स्वयं जानना चाहिये। इसे स्वरोदय ज्ञान में तिथि नक्षत्र वार ग्रह देवताभद्रा व्यतीपात वैधृति आदिका दोष नहीं है । हे देवि! इसमें न कोई कुयोग है और न कभी होगा,जब स्वर का शुद्ध बल प्राप्त हो तब सम्पूर्ण फल शुभ ही है ।२७-३०।

देहमध्ये स्थितो नाड्यो बहुरूपाः सुविस्तरात्।
ज्ञातव्याश्च बुधैर्नित्यं स्वदेहज्ञानहेतवः ॥३१॥
नाभिस्थानगकन्दोर्ध्वमंकुरा इव निर्गन्ताः।
द्विसप्ततिसहस्राणि देहमध्ये व्यवस्थिताः ॥३२
नाड़ीस्थानकुंडलीशक्तिभुजङ्गाकारशायिनी।
ततो दशोर्ध्वगानाड्यो दशैवाधःप्रतिष्ठिताः।३३
द्वे द्वे तिर्यग्गते नाड्यौ चतुर्विंशतिसंख्यया।
प्रधाना दश नाड्यस्तु दशवायुप्रवाहकः॥३४॥

देह के मध्यमें अनेक प्रकारकी तथा बिस्तारवाली बहुतसी नाड़ी हैं वे सब अपने देह के ज्ञान के लिये विद्वानों को जानना चाहिये ॥ नाभिस्थान के कन्द्र से ऊपर अंकुर की तरह निकली है और देह में

बहत्तर हजार नाड़ी हैं, नाड़ी में स्थित सर्प के समान कुंडली शक्ति है उससे ऊपर को जाने वाली दश नाड़ी हैं और दश ही नीचे दी गई हैं ।। दो दो नाड़ी जो तिरछी गयी हैं उनकी संख्या चौबीसहैं उनमें दश नाड़ी मुख्य हैं और दश वायु के बहाव को प्रवाहित करतीहैं ।

तिर्यगूर्ध्वस्तथा नाड्यौ वायुदेहसमन्विताः ।
चक्रवत्संस्थिता देहेसर्वाःप्राणसमाश्रिताः ॥३५
तासां मध्ये दश श्रेष्ठा दशकोतिस्त्र उत्तमाः
इडा च पिङ्गला चैव सुषुम्ना चतृतीयिका ॥३६
गान्धारी हस्तिजिह्वा च पूषा चैव यशस्विनी।
अलम्बुषा कुहूश्चैव शंखिनीदशमी तथा ॥३७
इडा वामे स्थिता भागे पिङ्गला दक्षिणेस्मृता ।
सुषम्ना मध्यदेशे नेगान्धारी वामचक्षुषि॥३८

तिरछी, ऊपर नीचे स्थित वायु और देहके आश्रित सब नाड़ी देह में चक्र की तरह हैं और सब ही प्राणी के आधीन हैं ।। उन सब नाड़ियों में दश नाड़ी श्रेष्ठ मानी हैं और दशों में यह तीन उत्तम मानी गईहैं इडा पिंगला और तीसरी सुषुम्ना ।। गांधारी हस्तिजिह्वा, पूषा, यशस्विनी, अलंवुषा, कुहू शंखिनी ये दश नाड़ियाँ

हैं ।। इडा नाड़ी वाय भाग में, पिंगला दक्षिण भाग में सुषुम्ना मध्य भाग में और गांधारी वामनेत्र में स्थित जाननी चाहिये ।।३५।३८।।

दक्षिणे हस्तिजिह्वा च पूषा कर्णे च दक्षिणे ।
यशस्विनी वामकर्णे आननेचाप्यलम्बुषा ।।३६
कुहुश्च लिंगदेशे तु मूलस्थाने तु शंखिनी ।
एवं द्वारं समाश्रित्य तिष्ठन्तिदशनाडिकाः।।४०
पिङ्गलेडा सुषुम्ना च प्राणमार्गे समाश्रिताः ।
एताहिदशनाडयस्तु देहमध्ये व्यवस्थिताः।।४१
नामानि नाड़िकानां तु बातानां तु वदाम्यहम् ।
प्राणोऽपानः समानश्च उदानोव्यानएवच।।४२
नागःकूर्मोऽथकृकलो देवदत्तो धनञ्जयः ।
हृदि प्राणो वसेन्नित्यमपानोगुदमध्यगो ।।४३

दाहिने नेत्रमें हस्तिजिह्वा और दाहिने कानमें पूषा, वाँये कान में यशस्विनी और मुख में अलम्बुषा जाननो चाहिये । कुहुलिंगदेश में और शंखिनी गुदास्थान में इस प्रकार शरी के दश द्वारों में दश नाड़ी स्थित हैं । पिंगला इडा, सुषुम्ना ये तीनों ही प्राणमार्ग में स्थित हैं ये दश नाड़ी देह के मध्य में स्थित हैं । नाड़ियों के

आधीन जो वायु हैं उनके नाम प्राण अपान, समान और व्यान हैं । नाग, कूर्म कृकल, देवदत्त, धनञ्जय और प्राणवायु हृदय में और अपान गुदामण्डल में सदा रहती हैं ॥३६।४३॥

समाना नाभिदेशे तु उदानः कण्ठमध्यगः ।
व्यानो व्यापी शरीरेषुप्रधानादश वायवः॥४४
प्राणाद्याः पंच विज्ञाता नागाद्याःपंच वायवः ।
तेषामपि चपंचानां स्थानानिचवदाम्यहम्॥४५
उद्गारे नाग आख्यातःकूर्म उन्मीलने स्मृतः ।
कृकलः क्षुतकृज्ज्ञेयो देवदत्तोविजृम्भणे ॥४६
न जहाति मृतं वापि सर्वव्यापी धनंजयः ।
एते नाडीषु सर्वासु भ्रमन्तेजीवरूपिणः ॥४७

नाभिदेश में समान कंठके मध्यमें उदान और सब शरीर में व्यान वायु व्याप्त होती है ये दश वायु सबमें मुख्य मानी हैं ॥ पाँच प्राण और पांच नाग आदि हैं, इन पांचों के भी मैं स्थान कहता हूँ । उद्गार में नागवायु नेत्रों के खोलने मीचनेमें कूर्म छींकनेमें कृकल वायु और जंभाई लेने में देवत्त वायु जानना चाहिये ॥ धनंजय वायु सदैव सब शरीरमे व्याप्त रहता है जोमृत शरीरको

भी नहीं छोड़ता। जीव रूपथे, दश वायु सब नाड़ियोंमें घूमते हैं ॥ ४४-४७॥

प्रकटं प्राणसंचारं लक्षयेद्देहमध्यतः।
इडापिङ्गलासुषुम्नाभिर्नाडीभिस्तसृभिर्बुधः ॥४८
इडा वामे च विज्ञेया पिंगला दक्षिणेस्मृता।
इडा नाड़ीस्थितावामाततोव्यस्ताचपिंगला॥४९
इडायाँ तु स्थितश्चन्द्रःपिंगलायांच भास्करः।
सुषुम्ना शम्भुरूपेण हंशम्भुसस्वरूपतः ॥५०
हकारो निर्गमे प्रोक्तः सकारेण प्रवेशनम्।
हकारः शिवरूपेणसकारः शक्तिरुच्यते ॥ ५१

देहके मध्य में प्राणों का जो संचार होताहै उसको इडा, पिंगला, सुषुम्ना इन तीन नाड़ियों से ही बुद्धिमान् मनुष्य समझ पाते हैं॥ शरीर के बाम भाग में इडा, दाहिने में पिंगला और नाडी वामरूप में स्थित है और उलटी पिंगला स्थित है॥ इडा में चन्द्रमा, पिंगला में सूर्य और सुषुम्ना हंस रूप से स्थित है और हंस शंभु रूप से स्थित है॥ श्वांस के निकलने पर हकारहै और प्रवेश में सकार,तथा हकार शिवरूप कहाहै और सकार को शक्तिरूप कहते हैं ॥४८-५१॥

शक्तिरूपः स्थितश्चन्द्रो वामनाडीप्रवाहकः ।
दक्षनाड़ीप्रवाहश्चशम्भुरूपो दिवाकरः ॥५२॥
श्वासे सकारसंस्थे तु यद्दानं दीयते बुधैः ।
तद्दानंजीवलोकेऽस्मिन्कोटिकोटिगुणंभवेत् ५३
अनेन लक्षयेद्योगी चैकचित्तः समाहितः ।
सर्वमेवविजानीयान्मार्गे वै चंद्रसूर्यो ॥५४॥
ध्यायेत्तत्वं स्थिरे जीवे अस्थिरे न कदाचन ।
इष्टसिद्धिर्भवेत्तस्य महालाभो जयस्तथ ॥५५॥

वामनाडी का संचालक चन्द्रमा शक्तिरूपसे विराजमान है और दक्षिण नाडीका सञ्चालक शंभुरूप सूर्यहैं। जब श्वास सकार में स्थित हो उस समय जो दानदे वह दान इस संसार में करोड़ फल देता है ॥ एकाग्र चित्त और सावधान योगी इसी मार्गमें चन्द्रमा और सूर्य के मार्गमें ही सबको समझ लें ॥ मनुष्य का जीव जिस समय शान्ति अवस्था में स्थित होय उसी समय तत्व का ध्यान करे, चंचलतामें कदापि न करे। उसको इष्ट की सिद्धि होती है और महान् लाभ होता है ।५२-५५

चंद्रसूर्यसमभ्यासं ये कुर्वन्ति सदा नरः ।
अतीतज्ञानागतज्ञानं तेषांहस्तगतं भवेत् ।५६॥

वामे चामृतरूपा स्यज्जगदाप्यायनं परम् ।
दक्षिणे चरभागेन जगदुत्पादयेत्सदा ॥५७
मध्यमा भवति क्रूरा दुष्टा सर्वत्र कर्मसु ।
सर्वत्र शुभार्येषु वामा भवतिसिद्धिदा ॥५८॥
निर्गमे तु शुभा वामा प्रवेशे दक्षिणा शुभा ।
चंद्र समः सुविज्ञेयो रविस्तु विषमः सदा॥५९

जो मनुष्य हमेशा चन्द्र सूर्य स्वरों का भली प्रकार अभ्यास करते हैं उनको भूत और भविष्य का ज्ञान भली प्रकार होता है। वामभाग की (इडा) नाड़ी अमृत रूप जो संसार की पोषक होती है और पिंगला नाड़ी दक्षिण के चर भाग को पैदा कहती है। (सुषुम्ना) क्रूरा नाड़ी सम्पूर्ण कर्मों में दुष्ट होती है और वाम नाड़ी संपूर्ण कार्यों में सिद्धि की दाता है। गमन के समय वें बाईं नाड़ी और प्रवेशके समय दाहिनी नाड़ी शुभ होती है सदां चन्द्रमा को सम और सूर्य को विषम जानो ॥५६।५९॥

चंद्रः स्त्रीपुरुषः सूर्यश्चंद्रो गौरोऽसतो रविः ।
चंद्रनाडीप्रवाहेण सौम्यकार्याणि कारयेत् ॥६०
सूर्यनाड़ीप्रवाहेण रौद्रकर्माणि कारयेत् ।
सुषुम्नायाः प्रवाहेण भुक्तिमुक्तिफलानिच॥६१

आदौ चन्द्रः सिते पक्षे भास्करौ हि सितेतरे।
प्रतिपत्तो दिनान्याहुस्त्रीणित्रीणि कृतोदया।।६२
सार्धद्विघटिके ज्ञेयः शुल्के कृष्णे शशी रविः।
वहत्येकदिनेनैव यथा षष्टिघटीः क्रमात् ।।६३

चंद्रमा स्त्री सूर्य पुरुष चंद्रमा गौ वर्ण औ सूर्य कृष्णवर्ण जानना चाहिये और जब चन्द्रमा की नाड़ी का संचालन हो तो शुभ फल वाले कार्य उस समय करैं। सूर्य नाड़ी का प्रवाह में हो तब रौद्र कर्मोंको करो और सुषुम्ना के संचालन में भोग और मुक्ति फल देने वाले कार्यों को करें। शुक्लपक्ष मे प्रथम चन्द्रमा का और कृष्णपक्ष में प्रथम सूर्यका स्बर चलता है प्रतिपदा से लेकर तीन २ दिन चन्द्रमा और सूर्यका स्वर संचालित होता है। ढाई घड़ो शुक्लपक्ष में चन्द्रमा. ढाई घड़ी कृष्णपक्षमे सूर्य एकदिन में साठ घड़ी पर्यन्त बहतें हैं, अर्थात् दोनों स्वरों की क्रम से चौबीस २ बार चलते हैं ।।६०–६३।।

बहेयुस्तद्घटीमध्ये मंचतत्वानि निर्दिशेत् ।
प्रतिपदा दिनान्याहुर्विपरीते विवर्जयेत ।।६४
शुक्लपक्षे भवेद्वासा कृष्णपक्षे च दक्षिणा।
जानीयात्प्रतिपत्पूर्वं योगी तद्युतमानसः।।६५।।

शशांकं वारयेद्रात्रौ दिवा वारय भास्करम् ।
इत्यभ्यासरतो नित्यं स योगी नात्रसंशयः ॥६६

सूर्येण बध्यते सूर्यचन्द्रश्चन्द्रेण बध्यते ।
योजानातिक्रियामेतांत्रैलोक्यंवशगंक्षणात्॥६७

उन हर एक ढाई घड़ियों में पांचों तत्व बहते हैं और प्रतिपदा से लेकर जो चन्द्रमा और सूर्य के दिन कहे हैं उनसे विपरीत हो अर्थात् चन्द्रमा के स्वर में सूर्यका और सूर्यके समय में चन्द्रमा का स्वर चले तो उसमें अशुभ समझना चाहिए ॥ शुक्लपक्ष में प्रतिपदा से लेकर प्रथम वामा और कृष्ण पक्षमें प्रथम दक्षिण नाड़ी को योगी एकाग्र अन्तःकरण से जाने॥ रात्रि के समय चन्द्र स्वर को जो दिनके समय सूर्य स्वर को निवारण करे। इस प्रकार अभ्यास करते हैं वही योगी हैं ॥ सूर्य के स्वर से सूर्य और चन्द्रमा के स्वर से चन्द्रमा बंद होता है और जो मनुष्य इस क्रिया को जानता है उसके वश में त्रिलोक क्षणमात्र में हो जाता हैं ॥ ६४-६७॥

उदयं चन्द्रमार्गेण सूर्येणास्तमने यदि ।
तदा ते गुणसंघाता विपरीतं विवर्जयेत् ॥६८

गुरुशुक्रबुधेन्दूनां वासरे वामनाडिका !

सिद्धिदा सर्वकार्येषु शुक्लपक्षे विशेषतः ॥६९
अर्काङ्गारकसौरीणां वासरे दक्षनाडिका ।
स्मर्त्तव्या चरकार्येषु कृष्णपक्षे विशेषतः ॥७०
प्रथमं वहते वायुर्द्वितीयं च तथानलः ।
तृतीयं बहते भूमिश्चतुर्थं वारुणो वहेत् ॥७१

चंद्रमा के स्वर में सूर्य का उदय हो और सूर्य स्वर में अस्त हो तो उस समय अनेक स्वर पैदा होते हैं और इससे विपरीत हो तो उसको वर्ज दे । बृहस्पति शुक्र, बुध और भौम इन वारों में वाम नाड़ी सब कार्यों मे सिद्धि की दाता है और शुक्लपक्ष में ५ह हो तो और भा त्रिशेष फल दाता होता है । रवि. मङ्गल, शनि, इन चारों में दक्षिण नाड़ी का स्मरण चर कार्यों में करना और इसका फल कृष्णपक्ष में विशेष होता है । प्रथम वायु तत्व द्वितीय वार अग्नि तत्व, तृतीय बार भूमितत्व चतुर्थ बार वरुणतत्व और पाँचवां आकाश बहता है ।६८ ७१।।

सार्द्धद्विघटिके पंच क्रमेणैवो दयन्ति च ।
क्रमादेकैकनाड्यां च तत्वानां पृथगुद्भवः॥७२
अहोरात्रस्य मध्ये तु ज्ञेया द्वादशसंक्रमाः ।
वृषकर्कटकन्यालिमृगमीनानिशाकरे ॥७३

मेषसिंहौ च कुम्भश्च तुला च मिथुनं धनम् ।
उदये दक्षिणे ज्ञेयः शुभाशुभविनिश्चयः॥७४॥
तिष्ठेत्पूर्वोत्तरे चन्द्रो भानुः पश्चिमदक्षिणे ।
दक्षनाड्यः प्रसारेतुनगच्छेद्याम्यपश्चिमे ॥७५॥

ढाई घड़ी-टीके मध्य में जो पूर्वोक्त पाँचों तत्व उदय होते हैं और नाड़ी में भी क्रमसे पृथक पाँचों तत्व उदय होते हैं ॥ रात्रि और दिन के मध्य में चंद्र और सूर्य की बारह संक्रांति दिन में बृष, कर्क कन्या, बृश्चिक मकर, मीन, संक्रांति चंद्रमा की होती हैं ॥ मेष, सिंह, कुम्भ, तुला, मिथुन, धन ये संक्रांति सूर्यकी जाननी चाहिये इस प्रकार उदय और दक्षिणके शुभ अशुभ का निर्णय जाना जाता है ॥ पूर्व और उत्तर में चंद्रमा टिकता है पश्चिम दक्षिण में सूर्य, दक्षिण नाड़ीके स्वर में दक्षिण और पश्चिम में नहीं जाना चहिए ॥ ७२–७५ ॥

वामाचारप्रवाहे तु न गच्छेत्पूर्व उत्तरे ।
परिपंथिभयं तस्य गतोऽसौ न निवर्त्तते॥७६
तत्र तस्मान्न गन्तव्यं बुधैः सर्वहितैषिभिः ।
तदा मंत्रे तु संयाते मृत्युरेव न संशयः॥७७॥
शुक्लपक्षे द्वितीयायामर्के बहति चन्द्रमाः ॥

दृश्यतेलाभदः पुंसो सौम्येसौख्यं प्रजायते॥७८
सूर्योदये यदा सूर्यश्चन्द्रश्चन्द्रोदये भवेत् ।
सिध्यन्ति सर्वकार्याणि दिवारात्रिगतान्यपि।७६

वाम नाड़ी के स्वर में पूर्व और उत्तर में न जाय तो उसको शत्रु का डर होताहै और जो गया वह फिर नहीं लौटता॥ इससे सबके हितैषी बुद्धिमान उस समय न जाँय यदि वह उस समय जायेंगे तो मृत्यु होने में संदेह नहीं ॥ यदि शुक्लपक्ष की द्वितीया के दिन सूर्यके प्रवाह में चंद्रमा हो तो वह पुरुषों को लाभ दायक होताहैऔर उस समय कार्य किया जाय तो सुख होता है ॥ जिस समय सूर्य के उदय में सूर्य और चंद्रमा के उदय में चंद्रमा का स्वर हो उस समय दिन वा रात्रि में किये हुए सब काम सिद्ध होते हैं ॥ ७६-७७

चंद्रकाले यदा सूर्यः सूर्यश्चंद्रोदये भवेत् ।
उद्वेगःकलहो हानिः शुभं सर्वनिवारयेत्॥८०॥
सूर्यस्य वाहे प्रवदंति विज्ञा ज्ञानं ह्यगम्यस्य-- तु निश्चयेन । श्वासेन युक्तस्य तु शीतरश्मेः प्रवाहकाले फलमन्यथा स्यात् ॥८१॥

अथ विपरीत लक्षणम् ।

यदा प्रत्पूषकालेन विपरीतोदयो भवेत् ।
चंद्रस्थाने बहत्यर्कों रविस्थाने च चंद्रमाः ॥८२
प्रथमे मनउद्वेगं धनहानिर्द्वितीयके ।
तृतीये गमनं प्रोक्तमिष्टनाशं चतुर्थके ॥८३

जिस समय चंद्रमा के समय में सूर्य और सूर्य के समय में चंद्रमा हो तो उस समय उद्वेग, कलह, हानि होतो है और सम्पूर्ण अच्छे कर्मोंकी निवृत्ति होती है । बुद्धिमान मनुष्य सूर्य के प्रवाह में अगम्य वस्तु का ज्ञान निम्चय से कहते हैं और चंद्रमा से श्वास का प्रवाह हो तो विपरीत फल होता है अर्थात् अगम्य वस्तु का ज्ञान नहीं होता जिस दिन प्रात:काल मे ही विपरीत स्वर हो अर्थात् चन्द्रमा के स्थान मे सूर्य और सूर्य के स्थान में चन्द्रमा का स्वर हो उस समय यह फल जानना चाहिये । प्रथम मन का उद्वेग, दूसरे में धन का नाश और तीसरे में भ्रमण और चौथे मे इष्ट का नाश होता है ॥८०-८३॥

पंचमे राजविध्वंशं षष्ठे सर्वार्थ नाशनम् ।
सप्तमेव्याधिदु:खानिअष्टमे मृत्युमादिशेत्॥८४
कालत्रये दिनान्यष्टौ विपरीत यदा बहेत् ।
तदा दुष्टफलंप्रोक्तं किंचिन्न्यूनं तु शोभनम्॥८५

प्रातर्मध्यान्हयोश्चन्द्रः सायं काले दिवाकरः ।
तदानित्यं जयोलाभो विपरीतविवर्जयेत् ॥८६
वामे वा दक्षिणे वापि यत्र संक्रमते शिवः ।
कृत्वा तत्पादमादौचयात्राभवतिसिद्धिदा ॥८७

पाँचवें में राज्य नाश छठे में सम्पूर्ण अर्थों का नाश सातवें में व्याधि और दुख और आठवें में मृत्यु का होना कहा है । प्रातःकाल, मध्यान्ह और सायंकाल इन तीनों कालों में यदि पूर्वोक्त विपरीत स्वरों का उदय आठ दिन तक निरन्तर चलता है तो उस समय दुष्ट फल कहा है, यदि कुछ काल विपरीत चले तो शुभ फल होता है । यदि प्रातःकाल और मध्यान्ह को चंद्रमा का सायंकाल को सूर्य का स्वर चले तो उस दिन जय और लाभ कहा है यदि विपरीत स्वर चले तो अनिष्ट फल होता है । यात्रा को जाते समय वाम या दक्षिण जो स्वर चलता हो उसी चरण को प्रथम आगे रखकर यात्र करे तो यात्रा सिद्धि को दाता होती है ॥८४-८७

चद्रः समपदः कार्यो रविस्तु विषमः सदा ।
पूर्णपादं पुरस्कृत्य यात्रा भवतिसिद्धिदा ॥८८
यत्रांगे वहते वायुस्तदंगकरसंतलात् ।

सुप्तोत्थितोमुखस्पृष्ट्वालभतेवांछितंफलमम्॥८६
परदत्ते तथा ग्राह्ये गृहान्निर्गमनेऽपि च ।
यदंगे बहते नाडी ग्राह्यं तेन करांघ्रिणां॥६०॥
न हानि; कलहो नैव कराटकैर्नापि विद्यते
निवर्तते सुखी चैव सर्वोपद्रवर्जित; ॥६१॥

चन्द्रमा का स्वर चलताहोतो सम पद २–४ ६ आदि आगे रखने से और सूर्य का स्वर चलता हो तो विषम पद १-३-५ आदि आगे रखने चाहिये इस प्रकार पूर्ण पाद आगे रखवे से यात्रा सिद्ध की दाता होती है ॥ जिस अङ्ग का स्वर चलता हो उसी अङ्गके हाथकी हथेली से शयन से उठकर मनुष्य अपने मुख का स्पर्श करे तो मनवांछित फल की प्राप्ति होती है ॥ दूसरे को दान देने से या ग्रहण करने में वा घर से बाहर जाने में जिस अङ्ग की नाडी चलती हो उसी हाथ या पैर को आगे करके बस्तु ग्रहण करे ॥न हानि हो न विग्रह हो न(शत्रु से भयहो और वह सदैव सुखी रहे और सब उपद्रवें से बचा रहेगा ॥६१

गुरुवन्धुनृपामाप्येष्वन्येषु शुभदायिनी ।
पूर्णांगेखलु कर्त्तव्याकार्यसिद्धिर्मनःस्थिता॥६२
अग्निचाराधमंधर्मा अन्यषां वादिनिग्रहः ।

कर्त्तव्याःखलुरिक्तायां जयलाभसुखार्थिभिः६३
दूरदेशे विधातव्यं गमनं तु हिमद्युतौ ।
अभ्यर्णदेशे दीते तु कारणविति केचन ॥६४॥
यत्किंचित्पूर्वमुद्दिष्ट लाभादिसमरामः ।
तत्सर्वं पूर्णनाडीषु जायते निर्बिकल्पकम् ॥६५॥

गुरू, बन्धु राजा मंत्री आदि से लाभ कार्य की सिद्धि चाहें तो हाथ मैं कोई फल आदि लेकर करनी. वह सिद्धि मनोवांछित फल की दाता है ॥ अग्नि का दाह चोर, अधर्म–कार्य और धर्म कार्य वादिको (दण्ड) देना हो तो खाली हाथ से ही जयलाभ, सुख चहाने वाला, कार्य की सिद्धि करे ॥ किसी का ऐसा मत है कि दूर देश मैं जाना हो तो चन्द्रमा के स्वर में और समीप देशमें जाना हो तो सूर्य के स्वर में गमन करा॥ जो लाभ आदिके विषय में प्रथम कहा है वह सब युद्ध केसमय तभो होता है जब नाड़ो पूरे पूरे स्वर से चलतो हो ॥६२–६५॥

सून्यनाड्या विपर्यस्तं त्पूर्वं प्रतिपादितम् ।
जायते नान्यथा चैव यथा सर्वज्ञभाषितम् ॥६६॥
व्यवहार खलोच्चाटे द्वेषिविद्यादिवञ्चक ।
कुपितस्वामिचोराद्ये पूर्णस्थाः स्युर्भयंकराः॥६

दूराध्वनि शुभश्चन्द्रो निर्विघ्नोऽभीष्टसिद्धिद: ।
प्रवेशकार्यहेतौ च सूर्यनाड़ी प्रशस्यते ॥९८
अयोग्ये योग्यता नाड्य योग्यस्थानेप्ययोग्यता
कार्यानुवन्धनोजीवो यथा रुद्रस्तथा चरेत्॥९९

और यदि शून्य नाड़ी चलती हो वह तो पूर्वोक्त फल शिवजी के कथनानुसार उलटा होता है । व्यवहार दुष्ट मनुष्य का उच्चाटन शत्रु विद्या आदि से ठगना स्वामी का कोप चोर आदि क्रूर कामों से पूर्ण स्वर भय के दायक होते हैं अर्थात् अच्छे नहीं । जो मनुष्य दूर जाना चाहे उसको चन्द्रमा का स्वर कष्ट है, जो मनोवाँछित फल को सिद्धि करता है और प्रवेश कार्य में सूर्य की नाड़ी श्रेष्ठ कही गई है । अनुचित कार्य में नाड़ी की योग्यता और उचित कार्य में अयोग्यता को कार्य का अनुबन्धो जीव प्राप्त होता है इसमें जैसा हो वैसा ही आचरण मनुष्य को करना चाहिये।९६-९९

चन्द्रवारे विषहते सूर्यो वलिवशं नयेत् ।
सुषुम्नायांभवेन्मोक्षएकोदेवस्त्रिधास्थित:।१००
शुभान्यशुभकार्याणि क्रियन्तेऽहर्निशं यदा ।
तदाकार्यानुरोधेन कार्यं नाडीप्रचालनम्॥१०१

अथ इडा ।

स्थिरकर्मण्यलंकारे दूराध्वगमने तथा ।
आश्रमे धर्मप्रासादे वस्तूनां संग्रहेऽपिच॥१०२
वापीकूपतडागादेः प्रतिष्ठा स्तंभदेवयोः ।
यात्रादाने विवाहे च वस्त्रालंकार भूषणे॥१०३

चन्द्रमा का स्वर चले तो किसी के लिये अनुचित कार्य को भी मनुष्य सह लेता है और सूर्य का स्वर चले तो वलवान् भी वश में हो सकता है और सुषुम्ना नाड़ी का स्वर हो तो मोक्ष को प्राप्त होता है। इस प्रकार स्वर तीन प्रकार से स्थित हैं। जिस समय रात दिन शुभ और अशुभ कर्म किये जांय तब कार्य के अनुसार नाड़ीको चलावें।स्थिर कार्य-भूषण दूर मार्गमें गमन, आश्रम मन्दिर और घर की वस्तुओ के संग्रह करने में। वावड़ी, कुआ, तालाब और देवस्तंभ इनकी प्रतिष्ठा और यात्रा दान विवाह वस्त्र अलंकार भूषण इनमें ॥१००-१०३॥

शांतिके पौष्टिके चैव दिव्यौषधिरसायने ।
स्वस्वामिदर्शने मित्र वाणिज्ये कणसंग्रहे॥१०४
गृहप्रवेशे सेवायां कृषौ च बीजवापने ।
शुभकर्माणि संधौ च निगमेचशुभःशशी॥१०५

विद्यारम्भादिकार्येषु बान्धवानां च दर्शने ।
जन्ममोक्षे च धर्मे चदीक्षायां मन्त्रसाधने।।१०

कालविज्ञानसूत्रे तु चतुष्पादगृहागमे ।
कालव्याधिचिकित्सायांस्वामिसंबोधनेतथा१०

शान्ति और पुष्टि के काम दिव्य औषधीरसायन अपने स्वामी के दर्शन व्यापार और अन्न के संग्रहमैं ।। और गृहप्रवेश सेवा खेती बीज का बोना शुभ कर्म सधि और गमन इममैं चन्द्रमा का स्वर शुभ होताहै।। विद्यारम्भ आदि कार्यों मैं बांधवोंके दर्शनमें जन्म मोक्षमें धर्म यज्ञ आदि की दीक्षा में और मंत्र की सिद्ध मैं ।। कालका ज्ञांन व सूत्र पशुओंके घर मैं आगमन मैं कालकी व्याधि की चिकित्सा मैं और स्वामी के बुलानेमें ।।१०४१०५

गजाश्वारोहेण धान्विगजाश्वानां च वंधने ।
परोपकरणे चैव निधीनां स्थापने तथा १०८

गीतबाद्यादिनृत्यादौ नृत्यशास्त्रविचारणे ।
पुरग्राम निवेशे च तिलकक्षेत्रधारणे ।।१०६

आर्तिशाकविषादेषु ज्वरिते मूर्छितेऽपि वा ।
स्वजनस्वामिसम्बन्धे अन्नादर्दारुसंग्रहे।।११०

स्त्रीणा दन्तादिभूषायां वृष्टेरागमने तथा ।

गुरुपूजाविषदीनां चालने च वरानने ॥१११॥

हाथी व घोड़े की सवारी धनुष का धारण हाथी व घोड़ेका बांधना दूसरोंका उपहार करना और खजाना का स्थापन करना॥गीत (बाजा) नृत्य और नृत्यशास्त्रका विचार नगर और ग्राम का प्रवेश तिलक और खेत का धारण इनमेंभी चन्द्र नाड़ी शुभ मानी गईहै॥रोगशोक बिषाद ज्वर पीड़ा मूर्छा परिवार और स्वामीकेसम्बन्ध में और अन्न और काठ के संगूह में भी चंद्रनाड़ी श्रेष्ठ है ॥ स्त्रियों को दन्त आदिक भूषण, वृष्टि का आगमन गुरु की पूजा और विष आदि को [बाहर निकालने] में हे पार्वती ! चन्द्रनाड़ी श्रेष्ठ है ॥ १०८॥१११॥

इडायां सिद्धिदं प्रोक्तं योगाभ्यासादि कर्म च।
तत्रापि वर्जयंद्वायु तेज आकाशमेव च।११२
सर्वकार्याणि सिद्धयन्ति दीवारात्रिगताऽयपि।
सर्वेषु शुभकार्येषु चन्द्रचारः प्रशस्यये॥११३॥

इडा नाड़ी में योगाभ्यास आदि कर्म सिद्धिका फल दाता कहा है यदि इड़ा नाड़ीमें जब वायु और आकाश तत्व बहते हों तब इड़ाकोभी बर्ज दे॥ दिन और रात्रिके सब काम इड़ानाड़ीमें सफल होते हैं और सम्पूर्ण शुभ कार्यों में चन्द्रमा का चार इड़ा उत्तम होताहै ॥११३

अथ पिंगला ।

कठिनक्रूरविद्यानां पठने पाठने तथा ।
स्त्रीसंगे वेश्यागमने महानौकाधिरोहणे॥११४
भ्रष्टकार्ये सुरापाने वीरमंत्राद्यु पासने ।
विह्वलोद्धंसदेशादौ विषदाने चवैरिणाम्॥११५
शास्त्राभ्यासे च गमने मृगयापशुविक्रये ।
इष्टिकाकाष्ठपाषाण रत्नघर्षणदारणे ॥११६
गत्याभ्यासे यंत्रतंत्रेदुर्गपर्वतरोहणे ।
द्यूते चौर्ये गजास्वादिरथसाधनवाहने ॥११७

कठिन और क्रूर (मारण) आदि विद्याओं के पढ़ने व पढ़ाने में, स्त्री का साथ और वेश्या के गमन में और (जहाज) के चढ़ने में । भ्रष्टाचार मदिरा का पान, वीर मन्त्र आदि की उपासना विह्वल होना, देश का विध्वंश और वैरियों को विष देना इनमें और शास्त्र का अभ्यास गमन मृगया, पशुओं का विक्रय ईंट काठ,पत्थर,रत्न इनका घिसना और तोड़ना इसमें सूर्य नाड़ी पिंगला श्रेष्ठ है । गमन का अभ्यास यंत्र-तंत्र किला और पर्वत पर चढ़ना जुआ और चोरी करना, हाथी घोड़ा रथ इनको साधना व लाना इनमें । ११४-११७

व्यायामे मारणोच्चाटे षट्कर्मादिसाधने ।
यक्षिणीयक्षवेतालविभूतादिनिग्रहे ॥११८
खरोष्ट्रमहिषादीनां गजाश्वारोहणे तथा ।
नदीजलौघतरणे भेषजे लिपिलेखने॥११६
मारणे मोहने स्तंभे विद्वेषोच्चाटने वशे ।
प्रेरणे कर्षणे त्तोभे दाने च क्रयविक्रये॥१२०
प्रेताकर्षणविद्वेषशत्रुनिग्रहणेऽपि च ।
खड्गहस्तेवैरियुद्धे भोगे वा राजदर्शने ।
भोज्येस्त्रीने व्यवहारेदीप्तकार्ये रविःशुभः।१२१

कसरत मारण उच्चाटन षट्कर्मों को सिद्ध करना और यक्षिणी यक्ष बेताल विष भूत आदि का निग्रह रोकना इनमें । गधा ऊंट भैंसा हाथी घोड़ा इन पर चढ़ना और नदीके वेग से पार उतरना, औषधि करना लीपना व लिखना इन में। मारना मोहन स्तंभन (रोक)करना विष बैरकरना उच्चाटन और वशमें करना प्रेरणा और खेती करना क्षोभ दान और लेन-देन में। प्रेत का बुलाना विरोध वैरी का निग्रह, दण्ड, तलवार को हाथ में लेना बैरी के सङ्ग युद्ध, भोग व राजा के दर्शन, भोजन व स्नान और व्यवहार, प्रकाशित कार्य इनमें सूर्य नाड़ी पिंगला शुभ है ॥११८-१२१॥

भुक्तमार्गेण मन्दाग्नौ स्त्रीणां वश्यादिकर्मणि।
शयनंसूर्यबाहेन कर्तव्यं सर्वदा बुधैः ॥१२२॥
क्रूराणि सर्वकर्माणि चाराणि विवधानि च।
तानिसिद्धंयन्तिसूर्येणनात्रकार्याविचारिणा१२३

भोजन द्वारा मन्दाग्नि करनेमें और स्त्रियों कोवशमें करना, सोना ये कब कर्म पण्डित लोग सूर्य स्वर के चलते समय करे ॥ समस्त क्रूर कर्म और अनेक प्रकार के चरकर्म ये सब पिंगला में सिद्ध होते हैं, इसमें कोई विचार नहीं करना ॥ १२२-१२३॥

अथ सुषुम्ना

क्षणं वामे क्षणं दक्षे यदा बहति मारुतः।
सुषुम्ना साच विज्ञेया सर्वकार्य हरा स्मृताः१२४
तस्यां नाड्यां स्थितोवह्निर्ज्वलन्ते कालरूपक।
विषवत्त विजानीयात्सर्व काप विनाशनम्।१२५
यदाऽनुक्रममुल्लंचघय यस्य नड़ीद्वयं वहेत्।
तदा तस्य विजानीयादशुभंनात्र संशयः ॥१२६
क्षणं वामे क्षणं दक्षे विपमं भावमादिशेत्।
विपरीतं फलं ज्ञेयं ज्ञातव्यं च वरानने।१२७

जो वायु क्षण भर वामभागऔर क्षण भर दक्षिण भागमैं चले उसे सुषुम्ना जाननी और सुषुम्ना नाड़ीसब कार्यों को हरने वाली कही है ।। सुषुम्ना नाड़ीमें टिकी अग्नि कालरूप चलती है उस अग्नि को विषवाली और सब कार्यों का नाशक जाना।। जब अपने अपने स्वाभाविक क्रम का उल्लंघन करके जिस पुरुषकी दोनों नाड़ो चलें तब उस पुरुष का असुभ जानना,इसमैं संशय नहीं है ।। क्षणभर बाम भाग और दक्षिण भाग मैं पवन चले तो उसको विषम कहे और हे पार्वती ! उसका उलटा फल जानना ।। १२४-१२७।।

उभयोरेव संचारं विषवत्तं विदुर्बधाः ।
न कुर्वात्क्रू रसौम्यानित्सर्वं विफलं भवेत्।१२८।
जीविते मरणे प्रश्ने लाभोलाभे जयाजये ।
विषमे विपरीते च संस्मरेज्जगदीस्वरम्।।१२९
ईश्वरे चिंतने कार्थ योगाभ्यासादि कर्म च ।
अन्यतत्र न कर्तव्यंजयलाभसुखैषिभिः ।।१३०
सूर्येण वहमानायां सुषुम्नायां मुहुर्मुहुः ।
शापंदद्याद्वरं दद्यात्सर्वथैव तदन्यथा ।।१३१।।

दोनों नाड़ियों के संचार को विधिवत् ऐसा विद्वान् कहते हैं, उसमैं क्रूर और सौम्य कर्म न करे, यदि करे

तो वे सब फल रहित होते हैं। जीना.मरना,प्रश्न,ला
अलाभ,जय,पराजय,विषय और विपरीति स्वर के चल
में नारायण का स्मरण करे।जगदीश्वरका चिंतन करे
उस समय योगाभ्यास आदि कर्म ही करना और ज
लाभ सुख के इच्छुक उस समय कोई काम न करे। ज
सूर्य की नाड़ी सुषुम्ना बारम्बार चले तो उस समय
शाप अथवा वरदे वह सब विपरीत होता है।१२८-१३

नाड़ी संक्रमणे काले तत्वसंगमनेऽपि च।
शुभं किंचिन्न कर्तव्यं पुन्यदानादिकिंचन॥१३
विषमस्योदयो यत्र मनसाऽपि न चिन्तयेत्
यात्राहानिकारीतस्य मृत्युःक्लेशोनसंशयः१
पुरो वामोर्ध्वतश्चन्द्रो दक्षाधः पृष्ठतो रवि
पूर्णरिक्तविवेकोऽय ज्ञातव्योदेशकःसदा॥१
ऊर्ध्ववामाग्रतो दूतो ज्ञेयो वामपथे स्थितः।
पृष्ठे दक्षे तथाऽधस्तात्सूर्यवाहागतःशुभः॥१

नाड़ी के संक्रमण काल में और तत्वों के संचा
में कोई शुभ काम ना करना और पुण्य दान आदि
भी न करने। जिस समय विषम स्वर का उदय हो
मन से भी किसी काम की चिंता न करे जो करे तो

मनुष्य की यात्रा हानि करनेवाली होती है और मृत्यु या क्लेश होता है इसमें सन्देह नहीं। जब पहिले वाम स्वर और पीछे चन्द्रस्वर हो और फिर दक्षिण स्वर के पीछे सूर्यस्वर का उदय हो तो ये दोनों क्रम पूर्ण और रिक्त सदैव पंडित जाने। वाम स्वर से पीछे या पहिले यदि आता हुआ दूत वाम भाग में स्थित हो और दक्षिण स्वर के पीछे या पहिले आता हुआ दूत दक्षिण भाग में स्थित हो तो अच्छा होता है ॥ १३२ से १३५ ॥

अनादिर्विषमः संधिर्निराहारो निराकुलः।
परे सूक्ष्मे विलीयेत सा सन्ध्या सद्भिरुच्यते १३६
न वेदं वेद इत्याहुर्वेदो वेदो न विद्यते।
परात्मा वेद्यते येन स वेदो वेद उच्यते ॥१३७
न सन्ध्यां सन्धिरित्याहुः संध्या संधिर्निगद्यते।
विषमः संधिगः प्राणः स संधिः संधिरुच्यते॥१३८

अनादि जो विषम सन्धि निराहार और निराकुल होकर परमसूक्ष्म ब्रह्म में विलीन हो जाय अर्थात् एकसी चलती हुई जिस सुषुम्ना से ब्रह्म की प्राप्ति हो जाय उस सुषुम्ना को सज्जन संध्या कहते हैं। पंडित गण वेद को वेद नहीं कहते और वेद वेद है भी नहीं, किन्तु ईश्वर जिससे जाना जाय उसे ही बुद्धिमानों ने वेद कहा है।

संध्या को पंडित लोग सन्धि नहीं कहते और न संध्या सन्धि कही जा सकती है, किन्तु जब विषम सन्धि में प्राण हो वही सन्धि कहाती है ॥१३६ से १३८॥

॥ इति नाड़ी भेद ॥

श्रीदेव्युवाच

देवदेव महादेव सर्वसंसारतारक ।
स्थितं त्वदीयहृदये रहस्यं वद मे प्रभो ॥१३९॥

पार्वती बोलीं—हे देवों के देव ! हे महादेव ! सब जगत् के तारक ! जो रहस्य आपके हृदय में स्थित है, हे प्रभो ! वह मुझसे कहिये ॥१३९॥

ईश्वर उवाच

स्वरज्ञानरहस्यात्तु न काचिच्चेष्टदेवता ।
स्वरज्ञानरतोयोगी स योगी परमो मतः॥१४०
पंचतत्त्वाद्भवेत्सृष्टिस्तत्त्वे तत्त्वं प्रलीयते ।
पंचतत्त्वं परं तत्त्वं तत्त्वातीतं निरञ्जनम् ।१४१
तत्त्वानां नाम विज्ञेयं सिद्धियोगेन योगिभिः ।
भूतानां दुष्टचिह्नानि जानातीह स्वरोत्तमः १४२
पृथिव्यापस्तथा तेजो वायुराकाशमेव च ।
पंचभूतात्मकं विश्वं यो जानाति स पूजितः १४३

महादेवजी बोले—स्वरज्ञान के रहस्य से परे कोई इष्ट देवता नहीं है, जो योगी स्वर के ज्ञान में रत है वही परम योगी कहा है। पाँच तत्त्वों से सृष्टि बनती है और तत्त्व में ही तत्त्व लय होता है, पाँच तत्व ही परमतत्त्व हैं और निरंजन (ब्रह्म) तत्त्वों से परे है। योगीजन सिद्धि के द्वारा तत्वों का नाम जाने, जो पुरुष स्वरों को ही उत्तम जानता है वह सब प्राणियों के दुष्ट चिह्नों को जान सकता है। जो मनुष्य पृथ्वी जल तेज वायु और आकाश इन पञ्चभूतात्मक विश्व को समझता है वही पूजने योग्य होता है॥ १४० से १४३॥

सर्वलोकस्थजीवानां न देहो भिन्नतत्त्वकः।
भूलोकात्सत्यपर्यन्तं नाडीभेदः पृथक्पृथक्॥ १४४
वामे वा दक्षिणे वाऽपि उदयाः पंच कीर्तिताः।
अष्टधा तत्त्वविज्ञानं शृणु वक्ष्यामि सुन्दरी॥ १४५
प्रथमे तत्वसंख्यानं द्वितीये श्वससंधयः।
तृतीये स्वरचिह्नानि चतुर्थे स्थानमेव च॥ १४६॥
पचमे तस्य वर्णाश्च षष्ठे तु प्राण एव च।
सप्तमे स्वादसंयुक्ता अष्टमे गतिलक्षणम्॥ १४७॥

भूलोक से सत्यलोक तक सब लोकों में स्थित जितने

जीव हैं उनका शरीर भिन्न-भिन्न तत्वरूप नहीं है परन्तु नाड़ी का भेद अलग-अलग है। वामभाग या दक्षिणभाग में पाँच-पाँच उदय कहे हैं। हे सुन्दरी! उन तत्वों का विज्ञान आठ प्रकारका मैं कहता हूँ, तू सुन। पहले तत्वों का संख्यान (गिनती), दूसरा भेद श्वासकी संधि, तीसरा स्वरोंका चिह्न, चौथा भेद स्वरों का स्थान। पाँचवाँ भेद तत्वों का रंग, छटे में प्राण, सातवें में स्वाद का संयोग, आठवें में गति के लक्षण ॥१४४ से १४७॥

एवमष्टविधं प्राणं विषुवन्तं चराचरम्।
स्वरात्परतरं देवि नान्यथा त्वम्बुजेक्षणे ॥ १४८॥
निरीक्षितव्यं यत्नेन सदा प्रत्यूषकालतः।
कालस्य वंचनार्थाय कर्मकुर्वन्ति योगिन॥१४९
श्रुत्योरंगुष्ठकौ मध्यांगुल्यौ नासापुटद्वये।
वदनप्रान्तके चान्यांगुलीर्दद्य च नेत्रयो ॥१५०॥
अस्यान्तस्तु पृथिव्यादितत्वज्ञ नं भवेत्क्रमत्।
पीतश्वेतारुणश्यामैर्बिन्दुभिर्निरुपाधिकम्। १५१

इस प्रकार सारे जगत्में व्यापक आठ प्रकारका प्राण होता है। हे देवि! स्वर से परे अन्यथा (इतर) ज्ञान नहीं है। प्रातःकाल से लेकर सदा स्वर को देखना, क्योंकि

योगीजन कालक्षेप के कर्मों को करते हैं परन्तु उनको स्वर और तत्वकी पहिचान रहती है। कानों में दोनों अँगूठे और नाक के दोनों छिद्रों में बीच की दोनों अँगुली मुखके प्रान्त भाग में और नेत्रों में (दोनों में) शेष अँगुली अर्थात् नेत्रों में तर्जनी, अनामिका और कनिष्ठा मुखप्रान्त में लगावें। इसके बीच पृथ्वी आदि तत्वों का ज्ञान क्रम से पीले, सफेद, लाल और श्याम बिन्दुओं से उपाधि रहित स्पष्ट होता है अर्थात् पृथ्वी का पीला वर्ण, जलका सफेद, तेजका लाल, वायु का श्याम और आकाश का चित्र वर्ण होता है ॥१४८ से १५१॥

दर्पणेन समालोक्य तत्र श्वासं विनिःक्षिपेत्।
आकारैस्तु विजानीयात्तत्वभेदं विचक्षणः ॥१५२
चतुरस्रं चार्धचन्द्रं त्रिकोणं वर्तुलं स्मृतम्।
बिंदुभिस्तु नभो ज्ञेयमाकारैस्तत्वलक्षणम् ॥१५३
मध्ये पृथ्वी ह्यधश्चापश्चोर्ध्वं वहति चानलः।
तिर्यग्वायुप्रवाहश्च नभो वहति संक्रमे ॥१५४॥
आपः श्वेताः क्षितिः पीता रक्तवर्णो हुताशनः।
मारुतो नीलजीमूत आकाशः सर्ववर्णकः॥१५५

दर्पण में मुँह को देखकर श्वास को छोड़े तथा आकारों

को देखकर तत्व के भेदको पंडित लोग जानें । चतुरस्र (चौकोर) अर्द्धचन्द्राकार, त्रिकोण (तिकोना). वर्तुल (गोला), विन्दुओं का आकार आँखों के आगे दीखे तो आकाशतत्व का लक्षण जानना । बीच में पृथ्वी, नीचे जल, ऊपर अग्नि और तिरछा वायु का प्रवाह होता है दो स्वरों का संक्रम चलता हो तो आकाशतत्व का चलना जाने । जलों का श्वेतवर्ण, पृथ्वी का पीला, अग्नि का लाल और वायु का नील मेघवर्ण आकाश सब वर्णरूप होता है ॥ १५२ से १५५ ॥

अथ स्थानपरत्वसे तत्वज्ञान

स्कन्धद्वये स्थितो वह्निर्नाभिमूले प्रभञ्जनः ।
जानुदेशे क्षितिस्तोयं पादान्ते मस्तके नभः॥ १५६

अथ स्वादसे तत्वज्ञान प्रकार

माहेयं मधुरं स्वादे कषायं जलमेव च ।
तीक्षणं तेजः समीरोऽम्ल आकाशं कटुक तथा ॥

अथ गतिसे तत्वज्ञान

अष्टांगुलं वहेद्वायुरनलश्चतुरंगुलम् ।
द्वादशांगुलं माहेयं वारुणं षोडशांगुलम् । १५८

दोनों कन्धों पर अग्नि, नाभि के मूल में वायु, जानुओं

में पृथ्वी, पाद (चरण) के आखिर में जल और मस्तक में आकाशतत्व स्थित रहता है। धरती का स्वाद मीठा, जल का खारा, तेज का तीखा, वायु का अम्ल और आकाश का कडुआ होता है। वायुका स्वर ८ अंगुल, अग्नि का ४ अंगुल, धरती का १२ अंगुल और जल का स्वर १६ अंगुल चलता है ॥ १५६ से १५८ ॥

ऊर्ध्वे मृत्युरधः शान्तिस्तिर्यगुच्चाटनं तथा ।
मध्ये स्तम्भं विजानीयान्नभः सर्वत्रमध्यमम् ॥१५९
पृथिव्यां स्थिरकर्माणि चरकर्माणि वारुणे ।
तेजसि क्रूरकर्माणि मारणोच्चाटतेऽनिले ॥१६०
व्योम्नि किंचिन्न कर्तव्यमभ्यसेद्योगसेवनम् ।
शून्यता सर्वकार्येषु नात्र कार्या विचारणा ॥१६१
पृथ्वीजलाभ्यांसिद्धिः स्यान्मृत्युर्वह्नौ क्षयोऽनिले।
नभसो निष्फलं सर्वं ज्ञातव्यं तत्ववादिभिः॥१६२

ऊर्ध्व स्वर चले तो मृत्यु, नीचा स्वर चले तो शांति, तिरछा चले तो उच्चाटन, मध्य का चले तो स्तम्भ (रोकना) ये कामकरे आकाशतत्व सब कामों में मध्यम जानना। पृथ्वी में स्थिर कार्य, जल में चर कार्य, तेज में क्रूर कार्य और मारुत (पवन) में मारण और उच्चाटन करने से

सिद्ध होते हैं। आकाश में कुछ काम न करे किन्तु योग के सेवनका अभ्यास करे और उसमें सब काम शून्य होते हैं इसमें विचार नहीं करना। पृथ्वी और जल तत्व से सिद्धि, अग्नितत्व से मृत्यु, पवन से क्षय (नाश) और आकाशतत्वसे सब काम निष्फल तत्ववादियों को जानने चाहिये ॥ १५९ से १६२ ॥

चिरलाभः क्षितेर्ज्ञेयस्तत्क्षणे तोयतत्त्वतः।
हानिःस्याद्वह्निवाताभ्यांनभसोनिष्फलंभवेत् १६३
पीतः शनैर्मध्यवाही हनुर्यावद्गुरुध्वनिः।
कवोष्णः पार्थिवो वायुः स्थिरकार्यप्रसाधकः १६४
अधोवाही गुरुध्वानः शीघ्रगः शीतलः स्थितः।
यः षोडशांगुलोवायुः सआपः शुभकर्मकृत १६५
आवर्त्तगश्चत्युष्णश्च शोणाभश्चतुरंगुलः।
ऊर्ध्ववाही च यः क्रूरः कर्मकारी स तैजसः।१६६

पृथ्वी तत्त्व से ज्यादा लाभ हो, जलतत्त्व से तुरन्त लाभ हो, वायु तथा अग्नितत्त्व से हानि और आकाशतत्त्व से निष्फल जानना। पीतवर्ण और धीरे-धीरे या मध्यम चलने वाला और हनु (ठोड़ी) पर्यन्त जिसका शब्द भारी हो और जो कि चित् उष्ण हो ऐसे पृथ्वी सम्बन्धी वायु

[स्वर] को स्थित कार्यों का साधक कहते हैं । जो नीचे को बहे और उसकी ध्वनि भारी हो, जो शीघ्र चले और उसकी स्थिति ठन्डी हो और जो सोलह अंगुल हो ऐसा स्वर जल का होता है उसमें शुभ कार्य करे । जो आवर्त [भौंरा] तक चले, अत्यन्त गर्म हो और लाल हो तथा चार अंगुल हो और ऊपर को चले वह स्वर तेजका है उसमें क्रूर कर्म करना चाहिये ।।१६३ से १६६।।

उष्णः शीतः कृष्णवर्णस्तिर्यग्गाम्यष्टकांगुलः ।
वायुः पवनसञ्ज्ञस्तु चरकर्मप्रसाधकः ।।१६७।।
यः समीरः समरसः सर्वतत्त्वगुणावहः ।
अम्बरं तं विजानीयाद्योगीनां योगदायकम् ।।१६८
पीतवर्णं चतुष्कोणं मधुरं मध्यमाश्रितम् ।
भोगदं पार्थिवं तत्त्वं प्रवाहे द्वादशांगुलम् ।।१६९
श्वेतमर्धेन्दुसंकाशं स्वादुकाषायमार्द्रकम् ।
लाभकृद्वारुणं तत्त्वं प्रवाहे षोडशांगुलम् ।।१७०

जो ठंडा-गर्म हो, काला हो और तिरछा चले तथा आठ अंगुल का हो वह वायु [स्वर] पवन का है उसमें चर काम सफल होते हैं । जो स्वर एकरस और सबतत्त्वों के गुणों को बहे उस स्वर को आकाश का जाने और

वही स्वर योगियों को योग देनेवाला होता है। जिसका वर्ण पीला हो, चौकोर हो और मधुर हो तथा मध्य में बहे और जिसका १२ अंगुल का प्रवाह हो वह पृथ्वी-तत्त्व होता है और भोग का दाता होता है। जिसका वर्ण सफेद हो, अर्द्धचन्द्राकार हो, स्वादु हो, कसैला आर्द्र (गीला) हो और जिसके प्रवाह का १६ अंगुल का प्रमाण हो वह जलतत्त्व होता है और लाभदायक है ॥१६७-१७०॥

रक्तं त्रिकोणं तीक्ष्णं च ऊर्ध्वभागप्रवाहकम् ।
दीप्तं च तैजसं तत्त्वं प्रवाहे चतुरंगुलम् ॥१७१॥
नीलं च वर्तुलाकारं स्वाद्वम्लं तिर्यगाश्रितम् ।
चपलं मारुतं तत्त्वं प्रवाहेष्टांगुलं स्मृतम् ॥१७२॥
वर्णाकारे स्वादवाहे अव्यक्तं सर्वगामिनम् ।
मोक्षदं नाभसं तत्त्वं सर्वकार्येषु निष्फलम् ॥१७३
पृथ्वी जले शुभे तत्त्वे तेजो मिश्रफलोदयम् ।
हानिमृत्युकरौ पुंसाम शुभौ व्योममारुतौ ।१७४

जिसका रंग लाल हो, जो तिकोना हो और तेज हो और जिसका प्रवाह ऊपर को हो तथा जो प्रकाशमान हो और जिसका प्रमाण चार अंगुल का हो वह तत्त्व तेज-सम्बन्धी जानना। जो नीला, गोल, स्वाद में खट्टा हो और तिरछा चलता हो और जो चल हो, जिसका प्रवाह

आठ अंगुल का हो वह तत्त्व पवन-सम्बन्धी जानना । वर्ण, आकार, स्वाद, प्रवाह में जिसकी गति अव्यक्त हो अर्थात् जिसमें सबका हेलमेल पाया जाय उसको आकाश-सम्बन्धी तत्त्व जाने और सब कार्यों में निष्फल होता है। पृथ्वीतत्त्व और जलतत्त्व शुभ होते हैं और तेज के तत्त्व में मध्यम फल होता है और आकाश तथा वायुतत्व में हानि, मृत्यु आदि अशुभ फल होते हैं ॥१७१-१७४॥

आपूर्वापश्चिमं पृथ्वी तेजश्च दक्षिणे तथा ।
वायुश्चोत्तरदिग्ज्ञेयो मध्ये कोणगतं नभः ॥१७५
चन्द्रे पृथ्वीजले स्यातां सूर्येऽग्निर्वा यदा भवेत् ।
तदा सिद्धिर्नसन्देहः सौम्यासौम्येषुकर्मसु ॥१७६
लाभःपृथ्वीकृतोह्नि स्यान्निशायां लाभकृज्जलम् ।
वह्नौमृत्युः क्षयोवायुर्नभः स्थानन्दहेत्क्वचित् १७७
जीवितव्ये जये लाभे कृष्यां च धनकर्मणि ।
मन्त्रार्थे युद्धप्रश्ने च गमनागमने तथा ॥१७८॥

पूर्व से लेकर पश्चिम तक पृथ्वीतत्व और उत्तर दिशा में वायुतत्व तथा मध्य की दिशा में आकाशतत्व जानना। चन्द्रमा के स्वर में पृथ्वी तथा जलतत्व और सूर्यके स्वरमें अग्नितत्व जिस समय हो उस समय में शुभ-अशुभ कर्मों की सिद्धि होती है इसमें सन्देह नहीं है। दिन में पृथ्वी

तत्व से और रात में जलतत्व से फायदा होता है और अग्नितत्व से मृत्यु तथा आकाशतत्व से कभी-कभी दाह भी हो जाता है। जीवन, जय, लाभ, कृषि, धन का कर्म, मन्त्र का कार्य और युद्ध का कर्म, प्रश्न, गमन और आगमन इनमें पृथ्वीतत्व श्रेष्ठ होता है ॥१७५ से १७८॥

आयाति वारुणे तत्वे शत्रुरस्ति शुभः क्षितौ।
प्रयाति वायुतोऽन्यत्र हानिमृत्यू नभोऽनले॥ १७९

पृथिव्यां मूलचिन्ता स्य.ज्जीवस्य जलवातयोः।
तेजसाधातुचिंतास्याच्छून्यमाकाशतोवदेत् १८०

पृथिव्यां बहुपादाः स्युर्द्विपदस्तोयवायुतः।
तेजस्येव चतुष्पादौ नभसा पादवर्जितः॥१८१॥

कुजो वह्नी रविः पृथ्वी सौरिरापः प्रकीर्तितः।
वायुस्थानस्थितौ राहुर्दक्षरन्ध्रप्रवाहह ॥१८२॥

अगर जल का तत्व हो तो शत्रु का आगमन जानना और पृथ्वीतत्व में शुभ होता है और वायुतत्व हो तो शत्रु दूसरे स्थानमें चला जायगा, आकाश व अग्नितत्व हो तो दुश्मन की हानि व मृत्यु होगी। यदि किसी के पूछते वक्त पृथ्वीतत्व हो तो मूल (वृक्ष आदि) की चिन्ता और जल तथा वायु तत्व में जीव की चिन्ता और तेज के तत्व में धातु चिन्ता समझनी और आकाशतत्व में शून्य कहे

अर्थात् कोई भी चिन्ता न कहे। पृथ्वीतत्व हो तो बहुत पैरों से अर्थात् बहुतों के संग गमन करेगा और जल व वायुतत्व हो तो दो पैरों से अर्थात् अकेला गमन करे और तेजतत्व हो तो चार पैरों से अर्थात् दो मनुष्यों से गमन करेगा और आकाशतत्त्व हो तो पादों से रहित कहे अर्थात् कहीं न जायगा ऐसे कहे । अग्नितत्व में मंगल, पृथ्वीतत्व में सूर्य, जलतत्व में शनिश्चर और वायुतत्व में राहु तब जाने जब दक्षिण स्वर चलता हो ॥१७९-१८२॥

जलं चन्द्रो बुधः पृथ्वी गुरुर्वातः सितोऽनलः ।
वामनाड्यां स्थिताः सर्वे सर्वकार्येषु निश्चिताः ॥ १८३

पृथ्वी बुधो जलादिन्दुः शुक्रो वह्नी रविः कुजः ।
वायू राहुशनी व्योम गुरुदेवं प्रकीर्तितः । १८४ ॥

प्रवासप्रश्न आदित्ये यदि राहुर्गतोऽनिले ।
तदासौ चलितो ज्ञेयः स्थानान्तरमपेक्षते ॥ १८५ ॥

आयाति वारुणे तत्वे तत्रैवास्ति शुभः क्षितौ ।
प्रवासी पवनेऽन्यत्र मृत्युरेवानले भवेत् । १८६ ।

यदि वामस्वर बहता हो तो जलतत्व में चन्द्रमा, पृथ्वीतत्व में बुध, वायुतत्व में बृहस्पति और अग्नितत्व में शुक्र समझना, ये सम्पूर्ण ग्रह सब कामों में इन पूर्वोक्त तत्वों में निश्चय से स्थित रहते हैं । पृथ्वीतत्व में बुध,

जलतत्व में चन्द्रमा और अग्नितत्व में सूर्य, मङ्गल तथा वायुतत्व में राहु और शनिश्चर, आकाशतत्व में बृहस्पति कहा है। अगर कोई पुरुष परदेश में गये हुए का प्रश्न करे और उस समय सूर्य के स्वर में राहु स्थित हो तो यह कहे कि वह परदेशी अन्यत्र जाने को उस स्थान से चल दिया। अगर प्रश्न करते समय जलतत्व बहता हो तो परदेशी के आगमन को कहे और पृथ्वीतत्व हो तो परदेशी जहाँ गया हो वहीं सुखी है ऐसे कहे और वायुतत्व हो तो दूसरे स्थान में चला गया ऐसे कहे और अग्नितत्व हो तो परदेशी मर गया ऐसे कहे ॥१८३-१८६॥

पार्थिवे मूलविज्ञानं शुभं कार्यं जले तथा ।
आग्नेयेधातुविज्ञानंव्योम्निशून्यंविनिर्दिशेत् ॥
तुष्टिः पुष्टि रतिः क्रीडा जयहर्षौ धराजले ।
तेजोवाय्वोश्च सुप्ताङ्गोज्वरकम्पः प्रवासिनः॥१८८
गतायुर्मृत्युराकाशो तत्वस्थाने प्रकीर्तिता ।
द्वादशैताः प्रयत्नेन ज्ञातव्या देशिकैः सदा॥१८९
पूर्वायां पश्चिमे याम्ये उत्तरस्यां यथाक्रमम् ।
पृथिव्यादीनि भूतानि बलिष्ठानिविनिर्दिशेत्॥

पृथ्वीतत्वमें मूल (वृक्ष आदि) का जानना और जल तत्व में अच्छे काम, अग्नितत्व में धातुओं का ज्ञान और

आकाशतत्त्व में शून्यता को कहे और किसी के ज्ञान को न कहे । अगर परदेशी के प्रश्न के समय पृथ्वी व जल तत्त्व हो तो सन्तोष, पुष्टता, प्रीति, रति, क्रीड़ा, जय और हर्ष, और तेज तथा वायुतत्त्व हो तो सोना और ज्वर से कंप परदेशी को कहा है । अगर आकाशतत्त्व हो तो अवस्था से रहित परदेशी की मृत्यु को कहे, ये १२ प्रश्न तत्त्वों के स्थान में कहे हैं, इनको पंडित लोग बड़े यत्न से जाने । पूर्व, पश्चिम, दक्षिण, उत्तर—इन चारों दिशाओं में क्रम से पृथ्वी, जल, तेज और वायु चारों तत्व बलवान कहे हैं ॥ १८७—१९० ॥

पृथिव्यापस्तथा तेजो वायुराकाशमेव च ।
पञ्चभूतात्मको देहो ज्ञातव्यश्च वरानने ॥१९१॥
अस्थि मांसं त्वचा नाडी रोमं चैव तु पंचमम् ।
पृथ्वी पंचगुणा प्रोक्ता ब्रह्मज्ञानेन भाषितम् १९२
शुक्रशोणितमज्जा च मूत्रं लाला च पंचमम् ।
आपः पंचगुणाः प्रोक्ता ब्रह्मज्ञानेन भाषितम् १९३
क्षुधा तृषा तथा निद्रा क्रांतिरालस्यमेव च ।
तेजः पंचगुणं प्रोक्तं ब्रह्मज्ञानेन भाषितम् ॥१९४

हे पार्वती ! पृथ्वी, जल, तेज, वायु और आकाश—इन पाँचों भूतरूप ही यह देह जानना अर्थात पञ्चभूतों से

ही पैदा होता है। और इस देह में अस्थि (हाड़), मांस, त्वचा, नाड़ी और पाँचवाँ रोम, ये पाँच गुण पृथ्वी के हैं यह बात वेदान्तशास्त्र के ज्ञाता ब्रह्मज्ञानी कहते हैं। ब्रह्मज्ञानी कहते हैं कि वीर्य, रुधिर, मज्जा, मूत्र और पाँचवीं लाला—ये पाँच गुण जलों के कहते हैं। ब्रह्मज्ञानियों का कहना है कि क्षुधा, तृषा, निद्रा, कांति और आलस्य—ये पाँच गुण तेज के कहे हैं ॥१८१—१८४॥

धावनं चलनं ग्रन्थः संकोचनप्रसारणे ।
वायोः पचगुणाः प्रोक्ता ब्रह्मज्ञानेन भाषितम् १८५
रागद्वेषौ तथा लज्जा भयं मोहश्च पंचमः ।
नभः पंचगुणं प्रोक्तं ब्रह्मज्ञानेन भाषितम् ॥१८६
पृथ्व्याः पलानि पचाशच्चत्वारिंशत्तथाम्भसः ।
अग्नेस्त्रिंशत्पुनर्वायोर्विंशतिर्नभसो दश १८७॥
पृथिव्यां चिरकालेन लाभश्चापः क्षणाद्भवेत् ।
जायतेपवने स्वल्पः सिद्धोऽप्यग्नौ विनश्यति १८८

और वेदान्ती कहते हैं कि भागना, चलना, गांठ देना, सकोड़ना और पसारना—ये पाँच गुण वायु के कहे हैं। और वेदान्तशास्त्रके ज्ञाता कहते हैं कि प्रीति, वैर, लज्जा, भय और मोह—ते पाँच गुण आकाश के इस देह में होते हैं। इस देह म पृथ्वी ५० पल, जल ४० पल, अग्नि

३७ पल, वायु २० पल और आकाश १० पल होते हैं अर्थात् पृथ्वी आदि तत्वों में अगला २ तत्व क्रम से १० पल कम होता है। पृथ्वीतत्व हो तो बहुत समय में लाभ और जलतत्व हो तो उसी क्षण में और पवनतत्व हो तो कम लाभ होता है और अग्नितत्व हो तो बना हुआ काम भी बिगड़ जाता है ॥१९५ से १९८॥

पृथ्व्या पंच ह्यपां वेदा गुणास्तेजो द्विवायुतः।
नभस्येक गुणश्चैव तत्त्वज्ञानमिदं भवेत् ॥१९९॥
फूत्कारकृत्प्रस्फुटिता विदीर्णा पतिता धरा।
ददाति सर्वकार्येषु अवस्थासदृशं फलम् ॥२००॥
धनिष्ठा रोहिणी ज्येष्ठाऽनुराधा श्रवणं तथा।
अभिजिदुत्तराषाढा पृथ्वीतत्त्वमुदाहृतम् ॥२०१॥
पूर्वाषाढा तथाऽऽश्लेषा मूलमार्द्रा च रेवती।
उत्तराभाद्रपदा तोयतत्त्वं शतभिषक् प्रिये ॥२०२

पृथ्वी के ५ गुण, जल के ४ गुण, तेज के ३ गुण, वायु के दो गुण और आकाश का एक गुण जानना यही तत्वोंका ज्ञान होताहै। फूत्कारत् करनेवाली, फूटीहुई फटी हुई और वृथा पड़ी हुई वह पृथ्वी सब कामों में अपनी अवस्था के समान फल देती है। धनिष्ठा, रोहिणी, ज्येष्ठा, अनुराधा, श्रवण, अभिजित् और उत्तराषाढा ये सात नक्षत्र

पृथ्वीतत्व कहे हैं । पूर्वाषाढा, आश्लेषा, मूल, आर्द्रा, रेवती, उत्तराभाद्रपदा और शतभिषा—ये सात नक्षत्र जल-तत्व कहे हैं ॥ १९९ से २०२ ॥

भरणी कृत्तिका पुष्यो मघा पूर्वा च फाल्गुनी।
पूर्वाभाद्रपदा स्वाती तेजस्तत्वमिति प्रिये ॥ २०३
विशाखोत्तरफाल्गुन्यौ हस्तचित्रे पुनर्वसुः।
अश्विनीमृगशीर्षे च वायुतत्वमुदाहृतम् ॥ २०४॥
वहन्नाडीस्थितो दूतो यत्पृच्छति शुभाशुभम्।
तत्सर्वं सिद्धिमाप्नोति शून्ये शून्यं न संशयः॥२०५
पूर्णेऽपि निर्गमश्वासे सुतत्वेऽपि न सिद्धिदः।
सूर्यश्चन्द्रोऽथवा नृणां संग्रहे सर्वसिद्धिदः॥२०६

भरणी, कृत्तिका, पुष्य, मघा, पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाभाद्रपदा और स्वाती—ये सात नक्षत्र तेजतत्व हैं। विशाखा उत्तराफाल्गुनी, हस्त, चित्रा, पुनर्वसु, अश्विनी और मृगशिर—ये सात नक्षत्र वायुतत्व कहे हैं । बहती हुई नाड़ी की ओर बैठा हुआ जो दूत अच्छा या बुरा पूछे वह सब सिद्ध होता है और शून्य में पूछे तो शून्य होता है इसमें सन्देह नहीं है । पूर्ण भी सूर्यतत्व अथवा चन्द्र-तत्व श्वास में बहता हो तो सिद्धि का देनेवाला नहीं होता अगर दोनों तत्वों का संग्रह हो तो सम्पूर्ण सिद्धियों को देता है ॥ २०३ से २०६ ॥

तत्वे रामो जयं प्राप्तः सुत्वे च धनञ्जयः ।
कौरवा निहताः सर्वा युद्धे तत्वविपर्ययात् ॥२०७
जन्मान्तरीयसंस्कारात्प्रसादादथवा गुरोः ।
केषांचिज्जायते तत्ववासना विमलात्मनाम् ॥२०८
लंबीजे धरणीं ध्यायेच्चतुरस्रां सुपीतभाम् ।
सुगन्धां स्वर्णवर्णाभां प्राप्नुयाद्देहलाघवम् ॥२०९
वंबीजं वारुणं ध्यायेत्तत्वमर्द्धशशि प्रभम् ।
क्षुत्तृष्णादिसहिष्णुत्वं जलमध्ये च मज्जनम् २१०

श्रेष्ठ तत्व में ही रामचन्द्रजी की जय हुई और श्रेष्ठ तत्व में ही अर्जुन की और तत्वों के विपरीत होने से सारे कौरव लड़ाई में मारे गये । जन्मान्तर के संस्कार से अथवा गुरु के प्रसाद से किन्हीं स्वच्छ आत्माओं को तत्वों का ज्ञान होता है । (लं) यह बीज पृथ्वी तत्वों में चतुरस्र [चौको], सोने के समान पीला, सुगन्ध ध्यान करना और ध्यान का करने वाला कान्ति व देहके लाघव को प्राप्त होता है । (बं) यह बीज जलतत्व में ध्यान करने के योग्य है और अर्द्धचन्द्र के समान इसका आकार है, इसके ध्यान करने वाले को भूख और प्यास की बाधा नहीं होती और जल में डूबने की शक्ति होती है अर्थात् डूबने से क्लेश नहीं होता है ॥२०७ से २१०॥

रंबीजमग्निजं ध्यायेत्त्रिकोणमरुणप्रभम् ।
बह्वन्नपानभोक्तृत्वमातपाग्निसहिष्णुता ॥२११॥
यंबीजं पावनं ध्यायेद्वर्तुलं श्यामलप्रभम् ।
आकाशगमनाद्यं च पक्षिवद्गमनं तथा ॥२१२॥
हंबीजं गगनं ध्यायेन्निराकारं बहुप्रभम् ।
ज्ञानं त्रिकालविषयमैश्वर्यमणिमादिकम् ॥२१३॥
स्वरज्ञानी नरो यत्र धनं नास्ति ततः परम् ।
गम्यते स्वरज्ञानेन ह्यनायासं फलं भवेत् ।२१४॥

(रं) यह बीज अग्नितत्व में तिकोना रक्तवर्ण ध्यान करने योग्य है इसके ध्यान करनेवाले को बहुत अन्नपान भक्षण करने की शक्ति होती है और घाम तथा अग्नि के वेग को सहन कर सकता है। (यं) यह बीज वायुतत्व में ध्यान करने योग्य और वर्तुल (गोल) और काला होता है। इसका ध्यान करने वाला आकाश में पक्षियों के समान गमन कर सकता है। (हं) यह बीज आकाश में ध्यान करने योग्य है, जो निराकार और अधिक कांति वाला है, इसके ध्यान करने वाले को त्रिकाल [भूत, भविष्यत्, वर्तमान] का ज्ञान और अणिमा आदि सिद्धि होती है। जिस स्थान में स्वर का ज्ञानी हो उससे

अलावा और कोई धन नहीं है, जो मनुष्य स्वर के ज्ञान से चलता है उसको अनायास [विना परिश्रम] के फल मिलता है ॥२११ से २१४॥

श्रीदेव्युवाच

देवदेव महादेव महाज्ञानं स्वरोदयम् ।
त्रिकालविषयंचैव कथं भवति शंकर ॥२१५॥

ईश्वर उवाच

अर्थकालजयप्रश्न शुभ शुभमिति त्रिधा ।
एतत्त्रिकालविज्ञानं नान्यद्भवति सुन्दरि॥२१६
तत्वे शुभ शुभ कार्यं तत्वे जयपराजयौ ।
तत्वे सुभिक्षदुर्भिक्षे तत्वं त्रिपदमुच्यते ॥२१७॥

पार्वती जी बोलीं—कि हे देवताओं के देव महादेव ! हे शंकर ! यह महान् स्वरोदय का त्रिकाल [भूत,भविष्यत् वर्तमान] विषयक ज्ञान किस प्रकार होता है ? शिवजी बोले—कि हे सुन्दरी ! अर्थ [प्रयोजन या धन] भूत, भविष्यत्, वर्तमान तीनों कालों का जय प्रश्न अच्छा-बुरा [पराजय आदि] का जो तीनों कालों में ज्ञान है, उसका कारण स्वरोदय है अन्य नहीं। तत्व के ही अधीन शुभ-अशुभ कार्य है और तत्व के अधीन जीत और हार

है तथा तत्वों के ही अधीन सुभिक्ष और दुर्भिक्ष है, इस प्रकार तत्व को ही त्रिपाद [तीनों कालों के कार्यों का कर्ता] कहते हैं ॥२१५ से २१७॥

श्रीदेव्युवाच

देवदेव महादेव सर्वसंसारसागरे ।
किं नराणां परं मित्रं सर्वकार्यार्थसाधकम्॥२१८

ईश्वर उवाच

प्राण एव परं मित्रं प्राण एव परः सखा ।
प्राणतुल्यः परो बन्धुर्नास्ति नास्ति वरानने २१९

श्रीदेव्युवाच

कथं प्राणस्थितो वायुर्देहः किं प्राणरूपकः ।
तत्वेषु संचरन्प्राणो ज्ञायते योगिभिः कथम् ॥२२०

पार्वती बोलीं—हे देवताओं के देव महादेव ! इस सारे संसार-समुद्र में मनुष्यों का परम मित्र और मनुष्यों के सब कार्यों का साधन क्या है सो कहो ? महादेवजी बोले–हे सुन्दरमुखी पार्वती ! प्राण ही परम मित्र है और सखा है, प्राण के समान दूसरा बन्धु नहीं है । पार्वती बोलीं—प्राण में वायु किस प्रकार स्थित है और क्या देह प्राणरूप है और तत्वों के विषय विचरते हुए प्राण

को योगीजन किस प्रकार जान जाते हैं ? ॥२१८–२२०॥

श्रीशिव उवाच

कायानगरमध्यस्थो मारुतो रक्षपालकः ।
प्रवेशे दशभिः प्रोक्तो निर्गमे द्वादशांगुलः॥२२१
गमने तु चतुर्विंशन्नेत्रवेदास्तु धावने ।
मैथुने पंचषष्टिश्च शयने च शतांगुलम् । २२२॥
प्राणस्य तु गतिर्देवि स्वभावाद्द्वादशांगुला ।
भोजने वमने चैव गतिरष्टादशांगुला ॥२२३॥
एकांगुले कृते न्यूने प्राणे निष्कामता मता ।
आनन्दस्तु द्वितीये स्यात्कविशक्तिस्तृतीयके२२४

शिवजी बोले—हे पार्वती ! इस कायारूपी नगर में स्थित हुआ प्राणवायु रक्षपाल [चौकीदार] है और वह प्राण प्रवेश के समय दश अंगुल और निकलने के समय बारह अंगुल का कहा है । और गमन के समय चौबीस अंगुल का और दौड़ने के समय बयालीस अंगुल का और मैथुन के समय पैंसठ अंगुल का और सोनेके समय में सौ अंगुल का कहा है । हे देवि ! प्राण की स्वाभाविक गति बारह अगुल है और भोजन तथा वमन के समय प्राण की गति अठारह अंगुल हो जाती है । यदि प्राण

की गति योगी एक अंगुल कम करले तो निष्काम की प्राप्ति होती है और दो अंगुल कम करले तो आनन्द की प्राप्ति और तीन अंगुल कम करने से कविता की प्राप्ति होती है ॥२२१ से २२४॥

वाचासिद्धिश्चतुर्थे च दूरदृष्टिस्तु पञ्चमे ।
षष्ठे त्वाकाशगमनं चण्डवेगश्च सप्तमे ॥२२५॥
अष्टमे सिद्धयश्चैव नवमे निधयो नव ।
दशमे दशमूर्तीश्च छाया नैकादशे भवेत् ।२२६
द्वादशे हंसचारश्च गङ्गामृतरसं पिवेत् ।
आनखाग्रं प्राणपूर्णे कस्य भक्ष्य च भोजनम् २२७
एवं प्राणविधिः प्रोक्तः सर्वकार्यफलप्रदः ।
जायते गुरुवाक्येन न विद्याश स्त्रकोटिभिः २२८

चार अंगुल कम करले तो वाणी की सिद्धि, पंच अंगुल कम करले तो दूरदृष्टि, छः अंगुल कम करले तो आकाश-गमन में शक्ति और सात अंगुल कम करले तो प्रचण्ड वेग हो जाता है । आठ अंगुल कम करले तो अणिमा आदि सिद्धियों की प्राप्ति, नौ अंगुल कम करने से नौ निधियों की प्राप्ति, दस अंगुल कम करने से दशों मूर्तियों [अनेक रूपों] की प्राप्ति और ग्यारह अंगुल कम करने से देह की छाया का अभाव प्राप्त होता है । बारह

अंगुल प्राण की गति कम हो जाय तो हंसगति गङ्गाजल के समान अमृत रस का पान मिलता है, अगर चोटी से लेकर नख तक प्राणों को पूर्ण योगी करले तो भक्ष्य और भोजन कैसा अर्थात् भक्ष्य-भोजन की निवृत्ति होजाती है। इस तरह सम्पूर्ण कार्यों के फल देने वाली प्राण की विधि कही है और उसका ज्ञान गुरु के वचनों से होता है विद्या और ग्रन्थों से नहीं होता ॥२२५ से २२८॥

प्रातश्चन्द्रो रवि सायं यदि दैवान्न लभ्यते।
मध्याह्नान्मध्यरात्र च परतस्तु प्रवर्तते ॥२२९॥
दूरयुद्धे जयी चन्द्रः समासन्ने दिवाकरः।
वहन्नाड्यागतः पादः सर्वसिद्धिप्रदायकः॥२३०॥
यात्रारम्भे विवाहे च प्रवेशे नगरादिके।
शुभकार्याणि सिद्ध्यन्ति चंद्रवाहेषु सर्वदा॥२३१॥
अयनतिथिदिनेशैः स्वीयतत्त्वे च युक्ते
यदि वहति कदाचिद्दैवयोगेन पुंसाम्।
स जयति रिपुसैन्यं स्तम्भमात्रस्वरेण
प्रभवति नच विघ्नं केशवस्यापि लोके॥२३२॥

यदि प्रातःकाल चन्द्रस्वर और सायंकाल को सूर्य-स्वर दैवयोग से न मिले तो मध्याह्न या आधी रात्रि से

परे प्रवृत्त होते हैं अर्थात् मिलते हैं। यदि दूर देशमें युद्ध कर्तव्य हो तो चन्द्रमा का स्वर जयकारी होता है, यदि वहती हुई नाड़ी के वक्त गमनकाल में पैर रखा जाय तो सब सिद्धियों को देता है। यात्रा के आरम्भ में विवाह, गृह व नगर-प्रवेश आदि सम्पूर्ण अच्छे कर्म चन्द्रस्वर के चार में सदा सिद्ध होते हैं। अयन, तिथि, वार—इनके स्वामियों से युक्त पुरुषों में अपना स्वर व तत्व दैवयोग से वहे वह पुरुष शत्रु की सेना को स्वरके स्तम्भ (रोकना) मात्र से जीतता है और वैकुण्ठलोक में भी उसको विघ्न नहीं होता ॥२२६ से २३२॥

रक्ष जीवं रक्ष जीवं जीवांगे परिधाय च।
जीवो जयति यो युद्धे जीवञ्जयति मेदिनीम्॥२३३

भूमौ जले च कर्तव्यं गमनं शान्तिकर्मसु।
वह्नौ वायौ प्रदीप्तेषु खे पुनर्नोभयेष्वपि॥२३४॥

जीवेन शास्त्रं बध्नीयाज्जीवेनैव विकासयेत्।
जीवेन प्रक्षिपेच्छस्त्रं युद्धे जयति सर्वदा॥२३५

आकृष्य प्राणपवनं समारोहेत वाहनम्।
समुत्तरे पदं दद्यात्सर्वकार्याणि साधयेत्॥२३६॥

जो जीव अपने अङ्ग में वस्त्रों को पहिनकर 'जीवं रक्ष जीवं रक्ष' युद्ध में ऐसे जपता है, वह पुरुष जीता हुआ

सम्पूर्ण पृथ्वी को जीतता है। शान्ति के कर्मों में पृथ्वी या जलतत्व में गमनकरे और प्रदीप (उग्र) कर्मों में अग्नि और वायुतत्व में गमन करे और आकाशतत्व में पूर्वोक्त दोनों प्रकार के कर्मों में गमन न करे। जीवस्वर में शस्त्र को बांधे अर्थात् जिस तरफ का स्वर चले उसी हाथ से शस्त्र को धारण करे और जीवस्वर से ही शस्त्र को खोले और जीवस्वर में ही शस्त्र को फेंके वह मनुष्य लड़ाई में सदैव जय पाता है। जो पुरुष प्राणवायु को खींचकर घोड़ा आदि सवारी पर चढ़े और पवन के घोड़े की रकाब में पैर रखे वह सम्पूर्ण कार्यों को सिद्ध करेगा।२३३-२३६।

अपूर्णे शत्रुसामग्रीं पूर्णे वा स्वबलं तथा।
कुरुते पूर्णतत्वस्थो जयत्येको वसुन्धराम्॥२३७

या नाडी वहते चांगे तस्यामेवाधिदेवता।
सम्मुखेऽपि दिशा तेषां सर्वकार्यफलप्रदा॥२३८॥

आदौ तु क्रियते मुद्रा पश्चाद्युद्धं समाचरेत्।
सर्पमुद्रा कृता येन तस्य सिद्धिर्न संशयः॥२३९॥

चन्द्रप्रवाहेऽप्यथ सूर्यवाहे
भटाः समायान्ति च योद्धुकामाः।
समीरणस्तत्त्वविदां प्रतीतो
या शून्यता सा प्रतिकार्यनाशम्॥२४०॥

यदि अपूर्ण स्वर में दुश्मन की सामग्री और सम्पूर्ण स्वर में अपनी सामग्री की शक्ति हो तो पूर्ण तत्वमें इस प्रकार टिका हुआ पुरुष अकेला भी पृथ्वी को जीतताहै। अपने अङ्गमें जो नाड़ी (स्वर) बहती हो और उसी नाड़ी में उस नाड़ी का देवता और उसकी दिशा सामने हो तो सब कार्यों का फल देती है। मनुष्य पहिले मुद्रा को करे बाद में युद्ध करे, जो पुरुष सर्पमुद्रा करता है उसकी सिद्धि होती है इसमें सन्देह नहीं। चन्द्रस्वर के अथवा सूर्यस्वर के चलमें समय समीरण (वायुतत्व) बहता हो और तत्वके जानने वालों को बहता हुआ मालूम हो जाय तो युद्ध करने के लिये भट (योद्धा) अच्छी तरह आवेंगे और यदि शून्यता हो अर्थात् वायु व आकाशतत्व बहते हों तो कार्य का नाश होता है ॥२३७ से २४०॥

यां दिशं वहते वायुर्युद्धं तद्दिशि दापयेत्।
जयत्येव न संदेहः शक्रोऽपि यदि चाग्रतः॥२४१

यत्र नाड्यां वहेद्वायुस्तदंगे प्राणमेव च।
आकृष्य गच्छेत्कर्णान्तं जयत्येव पुरन्दरम्॥२४२

प्रतिपक्षप्रहारेभ्यः पूर्णाङ्गं योऽभिरक्षति।
न तस्य रिपुभिः शक्तिर्बलिष्ठैरपि हन्यते॥२४३

अंगुष्ठतर्जनीवंशे पादांगुष्ठे तथा ध्वनिः।
युद्धकाले च कर्तव्यो लक्षयोद्धुर्जयो भवेत्॥२४४

जिस दिशा का वायुतत्व चलता हो उसी दिशा में लड़ाई के लिये सेना को भेजे तो चाहे आगे इन्द्र भी हो तो जीत होगी, इसमें सन्देह नहीं है । जिस नाड़ी का वायुतत्व बहता हो उसी नाड़ी के वायु से कर्ण पर्यन्त खींच करके गमन करे तो पुरन्दर (इन्द्र) को भी जीत सकता है। जो योधा प्रतिपक्ष (शत्रु) के प्रहारों से अपने सम्पूर्ण अङ्गों की रक्षा करता है उस योद्धा की शक्ति को बलवान दुश्मन भी नष्ट नहीं कर सकते । अँगूठा और तर्जनी अँगुलियों के वंश में और पैर के अँगूठे में युद्ध के समय जो ध्वनि (शब्द) करे तो लाख योद्धाओं को जीत सकता है ।।२४१ से २४४।।

निशाकरे रवौ चारे मध्ये यस्य समीरणः ।
स्थितो रक्षेद्दिगन्तानि जयकांक्षोगतः सदा।।२४५
श्वासप्रवेशकाले तु दूतो जल्पति वांछितम् ।
तस्यार्थः सिद्धिमायाति निर्गमेनैव सुन्दरि।।२४६
लाभादीन्यपि कार्याणि पृष्टानि कीर्तितानि च ।
जीवे विशति सिद्धयन्तिहानिर्निःसरणे भवेत्२४७
नरे दक्षा स्वकीया च स्त्रियां वामा प्रशस्यते ।
कुम्भको युद्धकाले च तिस्रोनाड्यस्त्रयोगतिः।।२४८

चन्द्रमा या सूर्य के प्रवाह में यदि वायुतत्व बहे तो

उस समय गमन करने वाला दिगन्तों की रक्षा करता है और सदैव जय को पाता है । जिस मनुष्य के श्वास के प्रवेश समय में दूत अपने मुँह से वांछित बात को कहे तो हे सुन्दरी ! गमन करते ही उस पुरुष का अर्थ सिद्ध होता है । पूछे और कहे हुए लाभ आदि सम्पूर्ण कार्य जीव नाड़ी के प्रवेश समय सिद्ध होते हैं और निकलने के समय नष्ट होते हैं । मनुष्यों की अपनी दक्षिण नाड़ी और स्त्रियों की बाम नाड़ी तथा युद्ध के समय में कुम्भक नाड़ी श्रेष्ठ होती है, इस प्रकार तीन नाड़ी हैं और तीन ही उनकी गति हैं ॥२४५ से २४८॥

हकारस्य सकारस्य विना भेदं स्वरः कथम् ।
सोऽहं हंसपदेनैव जीवो जयति सर्वदा ॥२४६॥

शून्यांगं पूरितं कृत्वा जीवांगो गोपयेज्जयम् ।
जीवांगे घातमाप्नोति शून्यांगं रक्षते सदा २५०

वामे वा यदि वा दक्षे यदि पृच्छति पृच्छकः ।
पूर्णेघातो न जायेत शून्ये घातं विनिर्दिशेत् २५१

भूतत्वेनोदरे घातः पदस्थानेऽम्बुना भवेत् ।
ऊरुस्थानेऽग्नितत्वेन करस्थाने च वायुना ॥२५२॥

हकार और सकार का भेद बिना स्वर ज्ञान के कैसे हो सकता है इससे जीव सोहं और हंस इन दो पदों से ही

सर्वदा जय को पाता है। शून्य अङ्ग को पूर्ण करके जीव-अङ्ग की रक्षा करने से जय प्राप्त होती है क्योंकि जीवांग में घात (नाश) को प्राप्त होता है और शून्यांग सदैव रक्षा करता है। यदि प्रश्न करने वाला वाम या दक्षिण की ओर बैठा हुआ युद्ध का प्रश्न करे और उस समय पूरा स्वर हो तो नाश न होगा और शून्य हो तो घाव होगा यह कहे। प्रश्न के समय पृथ्वीतत्व उदर में हो, जलतत्व पैरों में हो, अग्नितत्व जंघाओं में हो और वायुतत्व हाथों में हो तो घाव होगा अर्थात् शस्त्र लगेगा॥२४६–२५२॥

शिरसि व्योमतत्वे च ज्ञातव्यो घातनिर्णयः।
एवं पंचविधो घातः स्वरशास्त्रे प्रकाशितः २५३
युद्धकाले यदा चन्द्रः स्थायी जयति निश्चितम्।
यदा सूर्यप्रवाहस्तु स्थायी विजयते तदा॥२५४॥
जयमध्ये तु संदेहे नाडीमध्यं तु लक्षयेत्।
सुषुम्नायां गते प्राणे समरे शत्रुसंकटः॥२५५॥
यस्यां नाड्यां भवेच्चारस्तां दिशं युधि संश्रयेत्।
तदाऽसौ जयमाप्नोति नात्र कार्या विचारणा२५६

यदि आकाशतत्व बहता हो तो शिर में घाव का निश्चय जानना, इस प्रकार स्वरशास्त्र में पाँच तरह का

घात बतलाया है। जब लड़ाई के वक्त चन्द्रमा का स्वर चलता हो तो स्थायी (जिस पर चढ़ाई की जाय) को निश्चय ही जय होगी और जो सूर्य के स्वर का प्रवाह हो तो स्थायी (चढ़नेवाले) की जय हो। जो जय के मध्य में सन्देह हो तो नाड़ी के मध्य में देखे, यदि प्राणवायु सुषुम्ना नाड़ी में चलता हो तो युद्ध में शत्रु को संकट हो। जिस नाड़ी का चार (चलना) हो संग्राम के समय में उसी दिशा में खड़ा हो अर्थात् चन्द्रनाड़ी में पूर्व अथवा उत्तर में, सूर्यनाड़ी में दक्षिण अथवा पश्चिम, इस प्रकार वह युद्ध करनेवाला जय को प्राप्त होता है, इसमें कुछ विचार नहीं करना ॥ २५३ से २५६ ॥

यदि संग्रामकाले तु वामनाडी सदा वहेत् ।
स्थायिनो विजयं विद्याद्रिपुवश्योदयोऽपि च ॥ २५७

यदि संग्रामकाले तु सूर्यस्तु व्याप्तो वहेत् ।
तदा यायिजयं विद्यात्सदेवासुर मानवे ॥ २५८॥

रणे हरति शत्रुस्तं वामायां प्रविशेन्नरः ।
स्थानं विषुवचारेण जयः सूर्येण धावता ॥ २५९॥

युद्धद्वये कृते प्रश्ने पूर्णस्य प्रथमे जयः ।
रिक्ते चैव द्वितीयस्तु जयी भवति नान्यथा ॥ २६०

यदि संग्राम के समय बांयीं नाड़ी बहती हो तो स्थायी की विजय जान और शत्रु के वश में स्थायी का होना समझे। जो संग्राम के समय सूर्यका स्वर लगातार बहता हो तो उस समय देवता, राक्षस, मनुष्य के युद्ध में स्थायी की जय को जानना। जो मनुष्य वामनाड़ी के प्रचार में युद्ध में प्रवेश करता है उसको संग्राम में शत्रु हर लेते हैं और सुषुम्ना नाड़ी के बहते जो गमन करे उसको स्थान मिलता है अर्थात् युद्ध नहीं होता। सूर्यस्वर के बहते हुए गमन करे तो जय को प्राप्त होता है। यदि एक समय युद्धविषयक प्रश्न दो हों तो उस समय पूर्ण स्वर बहता हो तो पहिले की जय और खाली स्वर बहताहो तो दूसरे की जय, अन्यथा नहीं ॥२५७ से २६० ॥

पूर्णनाड़ीगतः पृष्ठे शून्यांगं च तदाग्रतः।
शून्यस्थाने कृतः शत्रुर्म्रियते नात्र संशयः॥२६१
वामचारे समं नाम यस्य तस्य जयो भवेत्।
पृच्छको दक्षिणे भागे विजयी विषमाक्षरः॥२६२
यदा पृच्छति चन्द्रस्य तदा सन्धानमादिशेत्।
पृच्छेद्यदा तु सूर्यस्य तदा जानीहि विग्रहम्॥२६३
पार्थिवे च समंयुद्धं सिद्धिर्भवति वारुणे।
युद्धे हि तैजसो भंगो मृत्युर्वायौ नभस्यपि॥२६४

अगर पूर्ण नाड़ी में गया हो तो दुश्मन पीठपर आवे अर्थात् शत्रु पीठ देकर भाग जाय, शून्य नाड़ी का अङ्ग हो तो शत्रु सामने आवे और शून्यस्थान में किया हुआ शत्रु मृत्यु को पाता है इसमें सन्देह नहीं। यदि कोई बांई ओर बैठकर प्रश्न करे तो उसके प्रश्नके वा जिस बातको पूछे उसके समाचार हों तो उसकी जय और विषम अक्षर वाले की पराजय होती है, यदि दक्षिण भाग में बैठकर प्रश्न करे तो विषम अक्षरवाले की जय और सम अक्षर वाले की हार हो। यदि पूछते समय चन्द्रमाका स्वर चले तो सन्धि (मेल) को कहे, यदि सूर्यके स्वरमें प्रश्न करे तो उस समय विग्रह (लड़ाई) को जाने। यदि पृथ्वीतत्व में युद्ध का आरम्भ हो तो युद्धमें बराबरी जल के तत्व में जय, तेजके तत्वमें भङ्ग (नाश), वायु और आकाशतत्व में मरण होता है ॥२६१ से २६४॥

निमित्तक्रमादाद्वा यदा न ज्ञायतेऽनिलः।
पृच्छाकाले तदा कुर्यादिदं यत्नेनबुद्धिमान् २६५
निश्चलां धारणां कृत्वा पुष्पं हस्तान्निपातयेत्।
पूर्णांगे पुष्पपतनं शून्यं वा तत्परं भवेत् ॥२६६॥
तिष्ठन्नुपविशश्चापि प्राणमाकर्षयन्निजम्।
मनोभङ्गमकुर्वाणः सर्वकार्येषु जीवति ॥२६७।

न कालो विविधं घोरं न शस्त्रं न च पन्नगाः ।
न शत्रु व्याधिचोराद्याः शून्यस्थानाशितुं क्षमाः ॥

यदि किसी निमित्त से या प्रमाद से प्रश्नके समय में दक्षिण या उत्तर स्वरका ज्ञान न हो तब बुद्धिमान पुरुष यत्न से यह करे कि निश्चल धारणा करके अपने हाथ से फूलको धरती पर गेरे, जो अग्रभाग में फूल पड़े तो पूर्ण फल और दूर पड़े तो शून्य फल जानना । जो पुरुष खड़ा होता और बैठता हुआ अपनी प्राणवायु को निश्चल मन से शरीर के भीतर खींचता है वह सब कार्यों के लिये जीतता है अर्थात् उसके सब काम सिद्ध होते हैं। काल और अनेक तरह के भयानक शस्त्र, सर्प, शत्रुव्याधि और चोर आदि शून्यस्थान में टिके ये सब मनुष्य को नाश करने को समर्थ नहीं होते ॥२६५ से २६८॥

जीवेन स्थापयेद्वायुं जीवेनारम्भयेत्पुनः ।
जीवेन क्रीडते नित्यं द्यूते जयति सर्वथा ॥२६९॥
स्वरज्ञानिबलादग्रे निष्फल कोटिधा भवेत् ।
इह लोके परत्रापि स्वरज्ञानी बली सदा ॥२७०॥
दश शतायुतं लक्षं देशाधिपबलंक्वचित् ।
शतक्रतुसुरेन्द्राणां बलं कोटिगुणं भवेत् ॥२७१॥

जीवस्वर से वायु को स्थिर करे फिर जीव से ही वायु

का आरम्भ करे, जीवसे ही द्यूतक्रीड़ा का आरम्भ करे तो द्यूत में निश्चय जय होती है। स्वरज्ञानी के बलके आगे बहुत तरह के बल भी निष्फल होते हैं क्योंकि स्वर का ज्ञानी इस लोक में और परलोक में सदा बलवान होता है। किसी पुरुष को दश, किसी को शत, किसी को दश हजार, किसी को लाख, किसी को देश के राज्य का बल होता है, इन्द्र और ब्रह्मा आदि देवताओं को उनसे कोटि गुना बल होता है ॥२६९—२७१॥

देव्युवाच

परस्परं मनुष्याणां युद्धे प्रोक्तो जयस्त्वया।
यमयुद्धे समुत्पन्ने मनुष्याणां कथं जयः॥२७२॥

ईश्वर उवाच

ध्यायेद्देवं स्थिरो जीवं जुहुयाज्जीवसंगमे।
इष्टसिद्धिर्भवेत्तस्य महालाभो जयस्तथा ॥२७३॥

निराकारात्समुत्पन्नं साकारं सकलं जगत्।
तत्साकारं निराकारं ज्ञाने भवति तत्क्षणात् ॥२७४

पार्वतीजी बोलीं—मनुष्यों के परस्पर संग्राम में जय की प्राप्ति आपने कही, जब यमराज के साथ युद्ध हो तब मनुष्य की किस तरह जय हो? महादेवजी बोले—कि हे पार्वती! जो मनुष्य स्थिर होकर देवताओं का ध्यान करे

और जीवसंगम (कुम्भक) प्राणवायु में जीव का होम करे उस मनुष्य को इष्ट की सिद्धि, महालाभ और जय प्राप्त होगी। निराकार ईश्वर से आकारवाला सब जगत् उत्पन्न हुआ है, निराकार ईश्वर के ज्ञान से यह जगत् साकार (आकार वाला) उसी क्षणमें हो जाता है ॥२७२–२७४॥

श्रीदेव्युवाच

नरयुद्धं यमयुद्धं त्वया प्रोक्तं महेश्वर।
इदानीं देवदेवानां वशीकरणकं वद ॥२७५॥

ईश्वर उवाच

चन्द्रं सूर्येण चाकृष्य स्थापयेज्जीवमण्डले।
आजन्मवशगा रामा कथितेयं तपोधनैः ॥२७६
जीवेन गृह्यते जीवो जीवो जीवस्य दीयते।
जीवस्थाने गतो जीवो बालाजीवातुकारकः२७७

पार्वती बोलीं कि–हे महेश्वर ! मनुष्य और यमराज का युद्ध आपने सुनाया, अब देवताओं के देवों को वश में करना चाहिये। महादेवजी बोले–कि स्त्री के चन्द्रस्वर को अपने सूर्यस्वर से आकर्षण करके अपने जीवस्वर को मण्डल में टिकावे तो स्त्री जन्मभर अपने वश में होती है, यह तपस्वियों ने कहा है, यह क्रिया अपनी विवाहत स्त्री में ही हो सकती है। पुरुष अपने जीवस्वर से स्त्री के जीवस्वर

को ग्रहण करे और स्त्री के जीवस्वर में अपना जीवस्वर दे, इस प्रकार जीव के स्थान में गया हुआ जीव जिसका ऐसा पुरुष जन्म पर्यंत स्त्री के वश में रहता है ॥२७५–२७७॥

रात्र्यन्तयामवेलायां प्रसुप्ते कामिनीजने ।
ब्रह्मजीवं पिबेद्यस्तु बालाप्राणहरो नरः ॥२७८

अष्टाक्षरं जपित्वा तु तस्मिन्काले गते सति ।
तत्क्षणं दीयते चन्द्रो मोहमायाति कामिनी२७९

शयने वा प्रसंगे वा युवत्यालिंगनेऽपि वा ।
यः सूर्येण पिबेच्चन्द्रं स भवेन्मकरध्वजः ॥२८०॥

शिव आलिंग्यते शक्त्या प्रसंगे दक्षिणेऽपि वा ।
तत्क्षणाद्दापयेद्यस्तु मोहयेत्कामिनीशतम् ।२८१

रात के पिछले पहर में स्त्री की निद्रा के समय जो मनुष्य ब्रह्म जीव (सुषुम्ना स्वर) को पीता है वह मनुष्य स्त्रियों के प्राणों को वशमें करता है। उस काल के समाप्त पर अष्टाक्षर मन्त्र को जप कर जो पुरुष अपना चन्द्रस्वर स्त्री को देता है तो वह कामिनी उसी क्षण में मोह को प्राप्त होती है। सोते समय वा स्त्री के संगम में अथवा स्पर्श के समय जो पुरुष अपने सूर्यस्वर से स्त्री के चन्द्र-स्वर को पीता है वह पुरुष कामदेव के समान मोह करने वाला होता है। अगर शिवस्वर (सूर्य) शक्तिस्वर से (चंद्र)

स्त्री-संगम के समय मिल जाय अथवा पुरुष अपना चन्द्र स्वर स्त्री को दे तो पुरुष सौ कामिनियों को मोहित कर सकता है ॥ २७८ से २८१ ॥

नव सप्त त्रयः पञ्च वारान्त्संगस्तु सूर्यभे ।
चन्द्रे द्वितुर्यषट्कृत्वोवश्याभवतिकामिनी ॥२८२
सूर्यचन्द्रौ समाकृष्य सर्पाक्रान्त्याऽधरोष्ठयोः ।
महापद्मे मुखं स्पृष्ट्वा बारंबारमिदं चरेत् ॥२८३
आप्राणमिति पद्मश्च यावन्निद्रावशं गता ।
पश्चाज्जागर्ति वेलायां चोष्येते गलचक्षुषी॥२८४
अनेन विधिना कामी वशयेत्सर्वकामिनीः ।
इदंनवाच्यमन्यस्मिन्नित्याज्ञा पारमेश्वरी ॥२८५॥

स्त्री के चन्द्रस्वर को अपने सूर्यस्वर में देने के बाद नौ, सात, तीन व पाँच बार संग हो जाय अथवा स्त्री के चन्द्रस्वर में अपना सूर्यस्वर कर दो, चार व छः बार मिल जाय तो वह कामिनी वश में होती है। अपने सूर्य और चन्द्रस्वर को सर्प की गति से खींचकर अधरोष्ठों पर स्त्री के मुँह से अपना मुँह स्पर्श करके वारम्बार पूर्वोक्त प्रकार से चन्द्र और सूर्य का मेल करे। जितने समय स्त्री नींद के वश में रहे तब तक पूर्वोक्त प्रकार से स्त्री के मुख-पद्म का पान करे फिर जागते समय गला व नेत्र इनका

चुम्बन करे। इसी विधि से कामी पुरुष सब कामिनियों को वश में करता है, परन्तु मेरी यही सच्ची आज्ञा है कि यह वशीकरण किसी अन्य पुरुष को अर्थात् लम्पट को न सुनावे ॥२८२ से २८४॥ ॥ इति वशीकरणम् ॥

अथ गर्भकरणम्

ऋतुकालभवं नारी पञ्चमेऽह्नि यदा भवेत्।
सूर्यचन्द्रमसयोर्योगे सेवनात्पुत्रसम्भवः। २८६॥
शंखवल्लीं गवां दुग्धे पृथ्व्यापो वहते यदा।
भर्तुरेवं वदेद्वाक्यं दर्पं देहि त्रिभिर्वचः। २८७॥
ऋतुस्नाता पिबेन्नारी ऋतुदानं तु योजयेत्।
रूपलावण्यसंपन्नो नरसिंहः प्रसूयते ॥२८८॥

ऋतुस्नान के बाद जब स्त्री को पाँचवाँ दिन हो उस समय पुरुष का सूर्यस्वर, स्त्री का चन्द्रस्वर चलता हो तो उस समय स्त्री का संग करने से पुत्र का जन्म होता है। जिस समय पृथ्वी और जलतत्व बहते हों उस समय स्त्री को गौ के दूध में शंखवल्ली को खिलावे फिर स्त्री अपने पति से तीन बार भोग की प्रार्थना करे। जब स्त्री ऋतुस्नान के बाद उक्त औषधि को पीले तब पुरुष ऋतुदान दे यानी भोग करे तो सुरूप और पराक्रमी सुन्दर नरों में सिंह पैदा होता है ॥२८६—२८८॥

सुषुम्नासूर्यवाहेन ऋतुदानं तु योजयेत् ।
अंगहीनः पुमान्यस्तु जायतेऽत्रकुविग्रहः ।। २८९

विषमांके दिवारात्रौ विषमांके दिनाधिपः ।
चन्द्रनेत्राग्नितत्त्वेषु वन्ध्या पुत्रमवाप्नुयात् ।। २९०

ऋत्वारम्भे रविः पुंसां स्त्रीणां चैव सुधाकरः ।
उभयोः संगमे प्राप्तो वंध्या पुत्रमवाप्नुयात् ।। २९१

ऋत्वारम्भे रविः पुंसां शुक्रान्ते च सुधाकरः ।
अनने क्रमयोगेन नादत्ते दैवदारुकम् ।। २९२ ।।

जो पुरुष सूर्यस्वर के प्रवाह के साथ सुषुम्नास्वर के वहने के समय ऋतुदान देता है उसके अङ्गहीन और कुरूप पुत्र उत्पन्न होता है । ऋतु के बाद विषम दिनों में पुरुष का सूर्यस्वर दिन व रातमें चले अर्थात् स्त्री का चन्द्र स्वर चले और पृथ्वी, जल, अग्नि इन तत्त्वों में गर्भाधान हो तो बांझ भी पुत्र को पाती है । यदि ऋतु के आरम्भ में पुरुषों का सूर्यस्वर और स्त्री का चन्द्रस्वर चले और दोनों का संगम हो जाय तो वंध्या स्त्री पुत्र को प्राप्त हो जाय । यदि भोग के आरम्भ में पुरुष का सूर्यस्वर चले और वीर्यपात के बाद चन्द्रस्वर बहने लगे तो इस क्रम-योग से स्त्री गर्भ धारण नहीं करती ।। २८९ से २९२ ।।

चन्द्रनाडी यदा प्रश्ने गर्भे कन्या तदा भवेत् ।
सूर्यो भवेत्तदा पुत्रो द्वयोर्गर्भो विहन्यते ॥२६३॥
पृथ्वी पुत्री जले पुत्रः कन्यका तु प्रभञ्जने ।
तेजसि गर्भपातः स्यान्नभस्यपि नपुंसकः ॥२६४
चन्द्रे स्त्री पुरुषः सूर्ये मध्यमार्गे नपुंसकः ।
गर्भप्रश्ने यदा दूतः पूर्णः पुत्रः प्रजायते । २६५॥
शून्ये शून्यं युगे युग्मं गर्भपातश्च संक्रमे ।
तत्त्ववित्स विजानीयात्कथितं तत्तु सुन्दरि॥२६६

यदि गर्भवती के प्रश्न के समय में चन्द्रमा की नाड़ी चले तो गर्भ में पुत्री होती है और सूर्यस्वर चले तो पुत्र और दोनों स्वर चलें तो गर्भ गिर जाता है । प्रश्न के समय में पृथ्वीतत्व हो तो कन्या, जलतत्व हो तो पुत्र, वायुतत्व हो तो पुत्री, तेजतत्व हो तो गर्भका स्राव, आकाशतत्व हो तो नपुंसक होता है । गर्भ के प्रश्न समय चन्द्रस्वर हो तो कन्या, सूर्यस्वर हो तो पुत्र, सुषुम्ना का स्वर हो तो नपुंसक होता है, यदि पूछने वाले दूत के पूर्ण अङ्ग हों तो लड़का पैदा होता है । हे सुन्दरी ! पूछने वाले के अङ्ग शून्य हों तो शून्य, दो स्वर चलते हों तो युग्म (दो), अगर स्वरों के संक्रम या सुषुम्ना हों तो गर्भ का पात तत्ववेत्ता जाने ॥२६३ से २६६॥

गर्भाधानं मारुते स्याच्च दुःखी दिक्षु ख्यातो
वारुणे सौख्ययुक्तः । गर्भस्रावः स्वल्पजीवश्च
वह्नौ, भोगी भव्यः पार्थिवेनार्थयुक्तः । २६७॥
धनवान्सौख्ययुक्तश्च भोगवान्नार्थसंस्थितः ।
स्यान्नित्यंवारुणेतत्त्वेव्योम्निगर्भोविनश्यति २६८
माहेन्द्रे सुसुतोत्पत्तिर्वारुणे दुहिता भवेत् ।
शेषेषुगर्भहानिःस्याज्जातमात्रस्यवामृतिः।।२६९॥
रविमध्यगतश्चन्द्रश्चन्द्रमध्यगतो रविः ।
ज्ञातव्यं गुरुतः शीघ्रं न वेदशास्त्रकोटिभिः।।३००

वायुतत्व में गर्भाधान हो तो दुःख वाला और जल-तत्व में गर्भाधान हो तो देशान्तरों में प्रसिद्ध और सुखी, अग्नितत्व में हो तो गर्भ का पात अथवा थोड़ा जीवन, पृथ्वीतत्व में हो तो भोगी, सुन्दर और धनवान लड़का पैदा होता है । जलतत्व में गर्भाधान हो तो धनवान, सुखी भोगवान जिनके हर समय धन रहे ऐसा पुत्र पैदा होता है, आकाशतत्व में गर्भाधान हो तो गर्भ नष्ट हो जाता है । पृथ्वीतत्व में गर्भाधान हो तो पुत्र की और जलतत्व में रहे तो कन्या पैदा होती है और शेष तत्व में रहे तो गर्भ की हानि या पैदा होते ही मृत्यु होती है । सूर्यस्वर के मध्य में, चन्द्रस्वर के मध्य में सूर्य की गति

गुरु से शीघ्र जाने, यह बात वेद और करोड़ों शास्त्रों से नहीं समझी जाती ।। २९७ से ३०० ।।

।। इति गर्भप्रकरणं समाप्तम् ।।

अथ संवत्सरफलम्

चैत्रशुक्लप्रतिपदि प्रातस्तत्त्वविभेदतः ।
पश्येद्विचक्षणो योगी दक्षिणे चोत्तरायणे ।।३०१
चन्द्रोदयस्य वेलायां वहमानोऽत्र तत्त्वतः ।
पृथिव्यापस्तथा वायुः सुभिक्षं सर्वसस्यजम् ।३०२
तेजोव्योम्नोर्भयं घोरं दुर्भिक्षं कालतत्त्वतः ।
एवं तत्त्वफलं ज्ञेयं वर्षे मासे दिनेष्वपि ।।३०३।।

चैत्र के शुक्लपक्ष की प्रतिपदा को प्रातःकाल के वक्त तत्त्वों के विभेद से विचक्षण (पण्डित) योगी दक्षिणायन और उत्तरायण देखे अर्थात् उस दिन के तत्वों के बहने से सालभर के फल को देखे । चन्द्रस्वर के उदय के समय यदि पृथ्वी, जल व वायुतत्व चले तो खेतियों को सुभिक्ष होता है । यदि चन्द्रस्वर में तेज और आकाशतत्व चलते हों तो घोर भय और दुर्भिक्ष होता है, इसी प्रकार समय के तत्वानुसार वर्ष, माह और दिनों में भी सम्पूर्ण तत्वों का फल जानना ।। ३०१—३०३ ।।

मध्यमा भवति क्रूरा दुष्टा सर्वेषु कर्मसु ।
देशभंगमहारोगक्लेशकष्टादि दुःखदा ॥३०४॥
मेषसंक्रान्तिवेलायां स्वरभेदं विचारयेत् ।
संवत्सरफलंब्र्याल्लोकानां तत्वचिन्तकः ॥३०५॥
पृथिव्यादिकतत्वेन दिनमासाब्दजं फलम् ।
शोभनं च यथा दुष्टं व्योममारुतवह्निभिः ॥३०६
सुभिक्षं राष्ट्रवृद्धिः स्याद्बहुसस्या वसुन्धरा ।
बहुवृष्टिस्तथा सौख्यं पृथ्वीतत्वं वहेद्यदि ॥३०७॥

मध्यमा (सुषुम्ना) नाड़ी क्रूर और सब कर्मों में बुरी, देश का भङ्ग, महारोग, क्लेश दुःख आदि अत्यन्त कष्टों को देती है। यदि मेष की संक्रान्ति के समय स्वर के भेद का विचार करे तो तत्व का चिन्तक मनुष्य लोगों को संवत्सर का फल कह सकता है । मेष संक्रान्ति के समय पृथ्वी आदि तत्वों से दिन, महीना और साल का फल शुभ जाने और आकाश, वायु और अग्नितत्व से बुरा फल जाने । यदि मेष संक्रान्ति के दिन पृथ्वीतत्व चले तो सुभिक्ष, देश की उन्नति, पृथ्वी में बहुत अन्न, अधिक वर्षा और बहुत सुख होता है ॥३०४ से ३०७॥

अतिवृष्टिः सुभिक्षं स्यादारोग्यं सौख्यमेव च ।

बहुसस्या तथा पृथ्वी अप्तत्वं वैवहेद्यदि ॥३०८

दुर्भिक्षं राष्ट्रभंगः स्यादुत्पत्तिश्च विनश्यति ।
अल्पादल्पतरा वृष्टिरग्नितत्वं वहेद्यदि । ३०९॥

उत्पातोपद्रवा भीतिरल्पा वृद्धिः स्युरीतयः ।
मेषसंक्रान्तिवेलायां व्योमतत्वं वहेद्यदि ॥३१०

मेषसंक्रान्तिवेलायां व्योमतत्वं वहेद्यदि ।
तत्रापि शून्यता ज्ञेयासस्यादीनां सुखस्य च ३११

यदि जलतत्व उस दिन बहता हो तो अति वर्षा, सुभिक्ष, आरोग्य और सुख तथा धरती में बहुत खेती होती है। यदि अग्नितत्व चलता हो तो दुर्भिक्ष, देश का भङ्ग और उत्पत्तिका नाश और बहुत कम वर्षा होती है। यदि मेष संक्रान्ति के समय वायुतत्व बहता हो तो उपद्रव भीति, कम वृष्टि, ईति (मूसे लगना आदि छः) होती हैं। यदि मेष संक्रान्ति के समय आकाशतत्व बहता हो तो सस्य आदि सुख की शून्यता जाननी ॥३८० से ३११॥

पूर्णप्रवेशने श्वासे सस्यं तत्वेन सिध्यति ।
सूर्यचन्द्रेऽन्यथाभूते संग्रहः सर्वसिद्धिदः । ३१२

विषमे वह्नितत्वं स्याज्जायते केवलं नभः ।
तत्कुर्याद्वस्तुसंग्राहो द्विमासे च महर्घता ॥३१३॥

रवौ संक्रमते नाडी चन्द्रमन्ते प्रसर्पिता ।
अनिले वह्नियोगेन रौरवं जगतीतले ॥ ३१४॥

यदि श्वास का पूर्ण प्रवेश हो जाय तो तत्वसे धान्य की सिद्धि होती है और यदि तत्वों के उदय के सक्त सूर्य व चन्द्रस्वर विपरीत हो जाय और चन्द्र के योग में सूर्य और सूर्य के योग में चन्द्र हो तो अन्न का संग्रह सिद्धि [लाभ] देता है । यदि विषम दक्षिण स्वर में अग्नितत्व हो अथवा केवल आकाशतत्व हो तो उस समय वस्तुओं को इकट्ठा करे तो दो माह में महर्घता [महँगापन] होगी। यदि रातके समय सूर्यकी नाड़ी बहती हो और प्रातःकाल के समय चन्द्रमा की बहने लगे और उस समय आकाश, वायु, अग्नितत्व इनका योग हो तो पृथ्वी पर रौरव [बड़े-बड़े अनर्थ] होते हैं ॥३१२—३१४॥

॥ इति संवत्सर प्रकरणम् ॥

अथ रोगप्रकरणम्

महीतत्वे स्वरोगश्च जले च जलमातृतः ।
तेजसि खेटवाटीस्तथा शाकिनो पितृदोषतः ३१५

यदि प्रश्नके समय पृथ्वीतत्व बहता हो तो स्व (प्रारब्ध) का रोग, जलतत्व बहता हो तो जलीका मातृकाओं का, तेजतत्व बहता हो तो खेटवाटी में रहने वाली शाकिनी व पितृदोष (पीड़ा) से रोग का होना समझना ॥३१५॥

आदौशून्यगतो दूतः पश्चात्पूर्णो विशेद्यदि ।
मूर्च्छितोऽपिध्रुवं जीवेद्यदर्थं परिपृच्छति।.३१६

यस्मिन्नंगे स्थितो जीवस्तत्रस्थः परिपृच्छति।
तदा जीवति जीवोऽसौ यदि रोगैरुपद्रुतः।३१८

दक्षिणेन यदा वायुर्दूतो रौद्र क्षरो वदेत् ।
तदा जीवति जीवोऽसौ चन्द्रे समफलं भवेत्३१८

जीवाकारं च वा धृत्वा जीवाकारं विलोक्य च ।
जीवस्थोरजीवितप्रश्नेतस्याज्जीवितंफलम् ।३१६

यदि पूछनेवला दूत पहले शून्य अङ्गकी ओर आया हो और बाद में पूर्ण अङ्ग की ओर बैठ जाय तो मूर्छित भी वह रोगी निश्चय जीवित हो जायगा जिसके लिये वह पूछता है । यदि जिस अङ्ग में जीव स्थित हो उसी अङ्ग की ओर बैठा हुआ प्रश्न करे तो रोगों से दुखी वह जीव अवश्य जियेगा। यदि वायु दक्षिण नाड़ी की चलती हो और दूत के मुँह से भयंकर वचन निकले तो वह जीव जीवेगा और चन्द्रस्वर हो तो समान फल होता है। जीवाकार को धारण कर और देखकर जीव में स्थित हुआ दूत जीने का प्रश्न करे तो उसको जीवन का फल होता है ॥ ३१६ से ३१६ ॥

वामचारे तथा दक्षप्रवेशे यत्र वाहने ।
तत्रस्थः पृच्छते दूतस्तस्य सिद्धिर्न संशयः ॥३२०
प्रश्ने चाधः स्थितो जीवो नूनं जीवो हि जीवति ।
ऊर्ध्वचारस्थितो जीवो जीवो याति यमालयम् ॥
विपरीताक्षरप्रश्ने रिक्तायां पृच्छको यदि ।
विपर्ययं च विज्ञेयं विषमस्योदये सति ॥३२२॥
चन्द्रस्थाने स्थितो जीव सूर्यस्थाने तु पृच्छकः ।
तदा प्राणविमुक्तोऽसौ यदि वैद्यशतैर्वृतः ॥३२३

वामनाड़ी (इडा) अथवा दाहिनी नाड़ी (पिङ्गला) इन दोनों के चलने वा प्रवेश करते समय जो दूत प्रश्न करे तो इसकी सिद्धि होती है, इसमें सन्देह नहीं है। यदि प्रश्न के समय दूत अधोभाग में स्थित हो तो वह रोगी प्राणी निश्चय ही जीवे, यदि प्राणी ऊर्ध्व भाग में स्थित हो तो यमालय में जायगा। यदि विषम नाड़ी (सुषुम्ना) का उदय हो और प्रश्न करने वाला रिक्त नाड़ी में ऐसा प्रश्न करे जिसके अक्षर विषम (१-३-५) आदि हों तो विपरीत फल समझना। यदि अपना जीव (श्वासवायु) चन्द्रमा के चार में स्थित हो और प्रश्न करने वाला सूर्य के चार में स्थित हो तो वह रोगी चाहे सौ वैद्यों से युक्त हो तो भी मृत्यु को प्राप्त होगा ॥३२० से ३२३॥

पिंगलायां स्थितो जीवो वामे दूतस्तु पृच्छति ।
तदाऽपि म्रियते रोगी यदि त्राता महेश्वरः॥३२४
एकस्य भूतस्य विपर्ययेण रोगाभिभूतिर्भवतीह
पुंसाम् । तयोर्द्वयोर्बन्धुसुहृद्विपत्तिः पक्षद्वये
व्यत्ययतो मृतिः स्यात् ॥३२५॥

यदि प्राणी पिंगला में स्थित हो और दूत बांई ओर स्थित होकर पूछे तो उस समय भी रोगी मर जायगा, चाहे शिवजी भी रक्षा क्यों न करें । एक भूत, (तत्व) के विपरीत होने से भी पुरुषों के रोग तिरस्कार कर देते हैं और दो तत्वों के विरुद्ध होने से बन्धु और मित्रों से विपत्ति होती है, यदि दो पक्ष (एक मास) तक व्यत्यय चला जाय तो मृत्यु होती है ॥३२४—३२५॥

॥ इति रोग प्रकरण समाप्त ॥

अथ कालप्रकरणम्

मासादौ चैव पक्षादौ वत्सरादौ यथाक्रमम् ।
क्षयकालं परीक्षेत वायुचारवशात्सुधीः ॥३२६॥

मास, पक्ष और वर्ष—इन तीनों के क्रम से आदि में विद्वान् मनुष्य वायु के प्रचारवश से क्षय (मृत्यु) के समय की जाँच करे ॥३२६॥

पञ्चभूतात्मकं दीपं शिवस्नेहेन सिंचितम् ।
रक्षयेत्सूर्यवातेन प्राणी जीवः स्थिरोभवेत् ।३२७
मारुतं बन्धयित्वा तु सूर्यं बन्धयते यदि ।
अभ्यासाज्जीवते जीवः सूर्यकालेऽपि वंचिते ।३२८
गगनात्स्रवते चन्द्रः कायपद्मानि सिंचयेत् ।
कर्मयोगसदाभ्यासैरमरः शशिसंश्रयात् ॥३२६॥
शशांक वारयेद्रात्रौ दिवा वार्यो दिवाकरः ।
इत्यभ्यासरतो नित्यं सयोगी नात्रसंशयः ॥३३०

इस पंचभूतात्मक दीप (शरीर) को शिवरूप स्नेह (तेल) से सींच कर सूर्यरूप वायु से जो जीव रक्षा करता है उसका प्राणी स्थिर होता है । जो पुरुष प्राणवायु को बाँध कर दिन भर सूर्यस्वर का बन्धन करता है इस तरह अभ्यास के बल से सूर्यकाल का बन्धन करके वह प्राणी जीवित हो सकता है । आकाशमें गमन करने से चन्द्रमा की किरण नीचे गिरकर देहरूपी कमलों को सींचती है, इस प्रकार कर्मयोग से योगी चन्द्रमा का सहारा लेने से अभ्यास द्वारा अमर हो जाता है । जो रात में चन्द्रस्वर का और दिनमें सूर्यस्वर का निवारण करता है, इस तरह अभ्यास में तत्पर वह योगी ही योगी है, इसमें सन्देह नहीं है ॥३२७ से ३३०॥

अहोरात्रे यदैकत्र वहते यस्य मारुतः ।
तदा तस्य भवेन्मृत्युः संपूर्णे वत्सरत्रये ॥३३१॥
अहोरात्रद्वयं यस्य पिंगलायां सदा गतिः ।
तस्य वर्षद्वयं प्रोक्तं जीवितं तत्ववेदिभिः ॥३३२
त्रिरात्रं वहते यस्य वायुरेकपुटे स्थितः ।
तदा संवत्सरायुस्तं प्रवदंतिमनीषिणः ॥३३३॥
रात्रौ चन्द्रो दिवा सूर्यो वहेद्यस्य निरन्तरम् ।
जानीयात्तस्यवैमृत्युः षण्मासाभ्यंतरे भवेत् । ३३४

जिस मनुष्य की प्राणवायु (श्वास) अहोरात्र भर एक स्थान में ही चलता रहे तब उस मनुष्य का मरण तीन साल में हो जायगा । जिस पुरुष के श्वास की गति दो अहोरात्र पिङ्गला में रहे, तत्व के जानने वालों ने उस पुरुष का जीना दो वर्ष का कहा है । जिस पुरुषका प्राण-वायु तीन रात्रि तक एक ही नासिका के छिद्र में स्थिर होकर चले तो विद्वान् पुरुष उसकी आयु एक वर्ष की कहते हैं । जिस मनुष्य का रात्रि में चन्द्रस्वर और दिन में सूर्यस्वर लगातार बहता रहे, उस मनुष्य की छः माह के भीतर मृत्यु होती है ॥३३१ से ३३४॥

लक्ष्यं लक्षितलक्षणेन सलिले भानुर्यदा दृश्यते

छीणो दक्षिण पश्चिमोत्तरपुरः षट्त्रिद्विमासैकतः। मध्यं छिद्रमिदं भवेद्दश दिनं धूमाकुलं तद्दिने सर्वज्ञै रपि भाषितं मुनिवरैरायुः प्रमाणंस्फुटम् ॥३३५॥

दूतः कृष्णकषायकृष्णवसनो दन्तक्षतो मुण्डितस्तैलाभ्यक्तशरीररज्जुकरो दीनोऽश्रुपूर्णोत्तरः। भस्माङ्गारकपालपाशमुसली सूर्यास्तमायाति यः काली शून्यपदस्थितो गदयुतः कालानल स्याद्दूतः ॥३३६॥

जिस मनुष्य को जल के बीच सूर्य का प्रतिबिम्ब छीण (कटा हुआ) क्रम से दक्षिण, पश्चिम, उत्तर और पूर्व में दीखे तो वह छः तीन दो एक मास तक जिन्दा रहेगा अर्थात् दक्षिण में जिसको कटा दीखे उसकी छः और पश्चिम में तीन, उत्तर में दो, पूर्व में एक मास की अवस्था जाननी, यदि प्रतिबिम्ब के मध्य में छिद्र दीखे तो दश दिन की अवस्था जाननी, यदि सारे प्रतिबिम्ब में धूमसा मालूम हो तो उसी दिन मरण जानना, यह सर्वज्ञ मुनीश्वरों ने आयु का प्रत्यक्ष प्रमाण कहा है। यदि प्रश्न करने वाला दूत काले, भगवे वस्त्र धारण कर अथवा दूत के दांतों में घाव हो, मुण्डित हो, तैलाभ्यङ्ग किये हो,

हाथ में रस्सी लिये हो, दीन हो, अश्रुपूर्ण अर्थात् उत्तर देने में अश्रुयुक्त अस्फुट वचन और भस्म, अङ्गार, कपाल, मुसल—ये जिसके हाथ में हों जो सूर्य छिपते समय आवे और जिसके पैर शून्यहों, इतने प्रकार का दूत पूछने आवे तो रोगी काल को प्राप्त होगा ऐसा जाने। ३३५-३३६॥

अकस्माच्चित्तविकृतिरकस्मात्पुरुषोत्तम: ।
अकस्मादिन्द्रियोत्पात: सन्निपाताग्रलक्षणम्३३७
शरीरं शीतलं यस्य प्रकृतिर्विकृता भवेत् ।
तदरिष्टं समासेन व्यासतस्तु निबोध मे।३३८॥
दुष्टशब्देषु रमतेऽशुद्धशब्देष चाप्यति ।
पश्चात्ताप भवेदस्य तस्य मृत्युर्न संशय: ॥३३९॥

जिस रोगी के चित्त में अचानक विकार हो जाय और अचानक उत्तर हो जाय और अचानक ही इन्द्रियों में उत्पात हो जाय तो ये सन्निपातके पूर्व लक्षण जानने। जिसका शरीर ठण्डा हो, प्रकृति में विकार हो तो संक्षेप में अरिष्ट समझना और मेरे सकाश से विस्तार से श्रवण कर। जो पुरुष बुरे-बुरे शब्दों को कहे और जो अशुद्ध वाक्यों को कहे फिर पीछे से पश्चात्ताप करे, उसकी मृत्यु होगी इसमें सन्देह नहीं ॥३३७—३३९॥

हुंकार: शीतलो यस्य फूत्कारो वह्निसन्निभ: ।

महावैद्यो भवेत्तस्य तस्य मृत्युर्भवेद्ध्रुवम्। ३४०
जिह्वां विष्णुपदं ध्रुवं सुरपदं सन्मातृकामंडल-
मेतान्येवमरुन्धतीममृतगुं शुक्रं ध्रुवं वा घ्रणम्।
एतेष्वेकमपि स्फुटं न पुरुषः पश्येत्पुरः प्रेषितः सोऽ
वश्यं विशतीह कालवदनं संवत्सरादूर्ध्वतः। ३४१
अग्नि शिमबिम्बं सूर्यस्य वह्नेः शीतांशुमालिनः।
दृष्ट्वैकादशमासायुर्नरश्चोर्ध्वं न जीवति॥ ३४२॥
वाप्यां पुरीषमूत्राणि सुवर्णं रजतं तथा।
प्रत्यक्षमथवा स्वप्ने दश मासान्न जीवति॥ ३४३

जिसका हुंकार शीतल हो और फूत्कार अग्नि के सदृश हो उसकी चाहे महान वैद्य रक्षा करे तो भी निश्चय मरना होगा। जो मनुष्य जिह्वा, आकाश, ध्रुव, देव, मार्ग, मातृकाओं का मण्डल, अरुन्धती, चन्द्रमा, शुक्र, अगस्ति–इनमें से एक को भी स्पष्ट कहने से न देखे वह रोगी अवश्य साल के भीतर मर जायगा। जिस पुरुष को सूर्य-चन्द्रमा का प्रतिबिम्ब और अग्नि इनकी किरणें मालूम न हों उस पुरुष की अवस्था ११ माह की जानना जिस मनुष्य को स्वप्न में अथवा जाग्रत में बावड़ीमें मल-मूत्र, सुवर्ण-चाँदी दीखे वह दश महीने से परे नहीं जीवेगा॥ ३४० से ३४३॥

क्वचित्पश्यति यो दीपं सुवर्णं च कषान्वितम्।
विरूपाणि च भूतानि नवमासान्न जीवति। ३४४

सस्थूलांगोऽपि कृशः कृशोऽपि सहसा स्थूल-त्वमालम्भ्यते, प्राप्तो वा कनकप्रभां यदि भवेत्-क्रूरोऽपिकृष्णच्छविः। शूरो भीरुसुधीरधर्म-निपुणः शान्तो विकारी पुमानित्येवं प्रकृतो प्रयाति चलनं मासाष्टकं जीवति ॥३४५॥

पीडा भवेत्पाणितले च जिह्वामूले तथा स्याद्रु-धिरं च कृष्णम्। विद्धं न च ग्लायति यत्र दृष्ट्या जीवेन्मनुष्यः स हि सप्तमासम् ॥३४६॥

जो मनुष्य कभी-कभी दीपक को अथवा कसौटी को लगाया हुआ सोना और सम्पूर्ण भूतों को विपरीत देखे वह नौ महीने के बाद नहीं जियेगा। जिस मनुष्य की प्रकृति (स्वभाव) इस तरह चलायमान हो जाय कि स्थूल हो तो एकदम कृश हो जाय और कृश हो तो एक दम स्थूल हो जाय और क्रूर वा कृष्णवर्ण होकर सोने के समान कान्तिवान हो जाय, शूरवीर होकर भीरु हो जाय, धार्मिक होकर अधर्मी होजाय और शांत होकर चञ्चल होजाय वह मनुष्य आठ महीने जीवित रहेगा। जिस मनुष्य के हाथ की हथेली पर पीड़ा हो, जीभ की जड़ में काला रक्त

हो जाय और जिसके गात्र में नोचने से दुःख न हो वह मनुष्य सात महीने जियेगा ॥३४४-३४६॥

मध्यांगुलीनां त्रितयं न वक्रं रोगं विना शुष्यति यस्य कंठ । मुहुर्मुहुः प्रश्नवशेन जाड्यात्षड्भिः स मासैः प्रलय प्रयाति ॥३४७॥

न यस्य स्मरणं किंचिद्विद्यते स्तनचर्मणि । सोऽवश्यंपञ्चमेमासि स्कन्धारूढो भविष्यति ॥३४८॥

यस्य न स्फुरति ज्योति पीड्यते नयनद्वयम् । मरणं तस्य निर्दिष्टं चतुर्थे मासि निश्चितम् ॥३४९

दन्ताश्च वृषणौ यस्य न किंचिदपि पीड्यते । तृतीयं मासमावश्यं कालाज्ञायां भवेन्नरः । ३५०

जिस मनुष्य की मध्य की तीन अंगुली न मुड़ें और रोग के बिना ही गला सूख जाय जिसको बारम्बार पूछने से जड़ता हो अर्थात् पूर्वापरका अनुसन्धान न रहे वह मनुष्य छः महीने में मरण को प्राप्त हो जायगा । जिस मनुष्य के स्तनों के चाम में शून्यता हो जाय वह मनुष्य पाँचवें महीने में चार पुरुषों के कन्धों पर जरूर चढ़ेगा अर्थात् मरेगा । जिस मनुष्य की आँखों की रोशनी (प्रकाश) न हो और दोनों आँख दुखती हों उस मनुष्य

का मरण चौथे महीने में अवश्य कहा है। जिस मनुष्य के दाँत और अण्डकोश में दबाने से दुख कुछ न हो वह तीसरे महीने में काल के हवाले होगा ॥३४७-३५०॥

कालो दूरस्थितो वापि येनोपायेन लक्ष्यते ।
तं वदामि समासेन यथाऽऽदिष्टं शिवागमे । ३५१
एकान्तं विजनं गत्वा कृत्वाऽऽदित्य च पृष्ठतः ।
निरीक्षयेन्न च्छायां कण्ठदेशे समाहितः। ३५२
ततश्चाकाशमीक्षेत ह्रीं परब्रह्मणे नमः ।
अष्टोत्तरशतं जप्त्वा ततः पश्यति शंकरम् ।३५३
शुद्धस्फटिकसंकाशं नानारूपधरं हरम् । षण्मासाभ्यासयोगेन भूचराणांपतिर्भवेत् । वर्षद्वयेन तेनाथ कर्त्ता हर्त्ता स्वयंप्रभुः । ३५४॥

दूर पर रहते हुए काल जिस उपाय से देखा जाय उस उपाय को शिवशास्त्र के अनुसार संक्षेप से कहता हूँ। एकान्त निर्जन वन में जाकर और सूर्य को पीठ पर करके अपनी छाया को सावधानी से कंठदेश में देखे । फिर आकाश को देख और 'ह्रीं परब्रह्मणे नमः' इस मन्त्र को १०८ बार जप करे तो वह मनुष्य शिवजी के दर्शन करेगा। जिन शिवजी का रूप शुद्ध स्फटिक के समान है और जो

अनेक रूपों को धारण करते हैं, इस प्रकार छः माह तक अभ्यास करने से भूचरों (प्राणियों) का राजा होता है और दो वर्ष अभ्यास करने से कर्ता-हर्ता स्वयं भगवान् हो जाता है ॥३५१ से ३५४॥

त्रिकालज्ञत्वमाप्नोति परमानन्दमेव च ।
सतताभ्यासयोगेन नास्ति किंचित्सुदुर्लभम् ३५५
तद्रूपं कृष्णवर्णं च पश्यति व्योम्नि निर्मले ।
षण्मासान्मृत्युमाप्नोति स योगी नात्र संशयः ३५६
पीते व्याधिर्भयं रक्ते नीले हानिं विनिर्दिशेत् ।
नानावर्णेऽथ चेतस्मिन्सिद्धश्चायते महान् ३५७

और निरन्तर अभ्यास करने से भूत, भविष्यत्, वर्तमान—तीनों कालों का ज्ञान और परमानन्द को प्राप्त होता है और उसको कोई वस्तु दुष्प्राप्य नहीं होती । जिस योगी को निर्मल आकाश में वह शिवजी का स्वरूप साँवला दीखे वह योगी छः माह में मृत्यु को पावेगा इसमें सन्देह नहीं । और पीतवर्ण दीखे तो व्याधि, लाल दीखे तो भय, नीला दीखे तो नुकसान होता है, अगर उसमें अनेक वर्ण दीखें तो योगी सिद्धियों को प्राप्त होता है ॥ ३५५—३५७ ॥

पदे गुल्फे च जठरे विनाशः क्रमशो भवेत् ।
विनश्यतो यदा बाहू स्वयं तु म्रियते ध्रुवम् ॥३५८
वामबाहुस्तथा भार्या नश्येतेति न संशयः ।
दक्षिणे बन्धुनाशो हि मृत्युं मासं विनिर्दिशेत् ३५६
अशिरो मासमरणं विनाजंघे दिनाष्टकम् अष्टभिः
स्कन्धनाशेन च्छायालोपेन तत्क्षणात् ।३६०॥

यदि छाया में पैर गुल्फ (टखने), पेट न दीखें और भुजा न दिखाई दे तो निस्सन्देह योगी मृत्यु पावेगा। अगर बाईं भुजा न दीखे तो पत्नी नष्ट होगी इसमें सन्देह नहीं, दांई भुजा न दीखे तो बान्धवों का नाश होगा और एक महीने में अपना मरण होगा। शिर न दीखे तो महीने भर, जघा न दीखे तो आठ दिन में, कन्धे न दीखें तो आठ दिन में, सर्वथा छाया न दीखे तो तत्काल ही मृत्यु जाननी ॥३५८—३६०॥

प्रातः पृष्ठगते रवौ च निमिषाच्छायाऽङ्गुलिश्चाधरं दृष्ट्वाऽद्धेंन मृतिस्त्वनन्तरमहो छायां नरः पश्यति । तत्कर्णांसकरास्य पार्श्वहृदयाभावेक्षणार्धात्स्वयं दिङ्मूढो हि नरः शिरोविगमतो मासांस्तु षड् जीवति ॥३६१॥

एकादिषोडशाहानि यदि भानुर्निरन्तरम् ।
वहेद्यस्य च वै मृत्युः शेषाहेन च मासिके ॥३६२॥
संपूर्णं वहते सूर्यश्चन्द्रमा नैव दृश्यते ।
पक्षेण जायते मृत्युः कालज्ञानेन भाषितम् ॥३६३॥
मूत्रं पुरीषं वायुश्च समकालं प्रवर्तते ।
तदाऽसौ चलितो ज्ञेयो दशाहे म्रियते ध्रुवम् ॥३६४॥

जो प्रातःकाल के समय सूर्य को पीठ पीछे करके छायापुरुष की अँगुली और ओठ न दीखे तो निमिषमात्र में और फिर छाया को तथा अपने को न देखे तो आधे निमिष में मृत्यु होगी और छाया के कान, कन्धे, हाथ, मुँह पार्श्व, हृदय न दीखें तो आधे क्षण में मरण हो और छायापुरुष का शिर न दीखे और स्वयं दिशाओं का ज्ञान न रहे तो मनुष्य छः महीना जीवित रहेगा । जिस पुरुष का एक दिन से सोलह दिन पर्यन्त नियम से सूर्य स्वर ही चलता रहे उस पुरुष की मृत्यु पन्द्रह दिनमें ही हो जायगी । जिस पुरुष का लगातार सूर्यस्वर ही वहता रहे और चन्द्रस्वर कभी न दिखाई दे तो उस पुरुष की मृत्यु पन्द्रह दिन के भीतर हो जायगी । जिस मनुष्य के मूत्र, मल, वायु एक बार निकले उसकी चला-चली ही जाने वह दस दिनमें अवश्य मर जायेगा ॥३६१-३६४॥

सम्पूर्णं वहते चन्द्रः सूर्यो नैव च दृश्यते ।
मासेन जायते मृत्युः कालज्ञेनानुभाषितम् ॥ ३६५
अरुंधतीं ध्रुवं चैव विष्णोस्त्रीणि पदानि च ।
आयुर्हीना न पश्यन्ति चतुर्थं मातृमंडलम् ३६६
अरुन्धतीं भवेज्जिह्वा ध्रुवो नासाग्रमेव च ।
ध्रुवौ विष्णुपदं ज्ञेयं तारकं मातृमण्डलम् । ३६७
नवं ध्रुवं सप्त घोषं पंच तारां त्रिनासिकाम् ।
जिह्वामेकदिनं प्रोक्तं म्रियते मानवो ध्रुवम् ३६८

जिस मनुष्य का निरन्तर चन्द्रस्वर बहता है और सूर्यस्वर एक बार भी न दीखे वह मनुष्य एक महीने में मर जायगा यह काल के विद्वानों ने कहा है । अरुन्धती, ध्रुव, विष्णु के तीन पद, चौथा मातृमण्डल—इनको जो न देखें उनको आयु से हीन जानना चाहिये । जिह्वा को अरुन्धती, नसिका के अगले भाग को ध्रुव, भ्रुकुटियों को विष्णु पद और तारकाओं को मातृमण्डल कहते हैं । जो भ्रुकुटी न देखे तो नौ दिन में, कानों का शब्द न सुने तो सात दिन में, तारा न दीखे तो तीन दिन में, जीभ न देखे तो एक दिन में मनुष्य का निश्चय मरण कहा है ॥ ३६५—३६८ ॥

कोणावक्ष्णोरंगुलिभ्यां किंचित्पीड्य निरीक्षयेत्।
यदा न दृश्यते बिन्दुर्दशाहेन भवेन्मृतः॥ ३६९॥
तीर्थस्नानेन दानेन तपसा सुकृतेन च।
जपैर्ध्यानेन योगेन जायते कालवञ्चना। ३७०॥
शरीरं नाशयन्त्येते दोषा धातुमलास्तथा।
समस्तु वायुर्विज्ञेयो बलतेजोविवर्धनः॥३७१॥
रक्षणीयस्ततो देहो यतो धर्मादिसाधनम्।
योगाभ्यासात्समायान्ति साधु याप्यास्तु साध्य-
ताम्॥ असाध्याजीवितं हन्ति नतत्रास्तिप्रति-
क्रिया॥ ३७२॥

आँखों के कोनों को अँगुलियों से कुछ दबाकर देखे अगर दबाने से तेज की बिन्दु न दिखाई दे तो जान लो कि दश दिनमें मर जायगा। तीर्थों के स्नान, दान, तप, सुकृत, जप, ध्यान, योग—इनसे काल की बंचना होजाती है अर्थात् आया हुआ काल भी टल जाता है। धातु और मल आदि ये दोष शरीर को नष्ट कर देते हैं और वायु की समानता बल और तेज बढ़ाने वाली होती है। इससे उस शरीर की रक्षा करनी जो धर्म आदि का साधन है, योगाभ्यास ही जय का रूप हो जाता है और योग से असाध्य साध्य हो जाता है, जो योगाभ्यास न हो तो

कष्टसाधक मर जाते हैं, उसका कोई प्रतीकार (इलाज) और नहीं ॥ ३६९—३७२ ॥

येषां हृदि स्फुरति शाश्वतमद्वितीयं। तेजस्तमोनिव हनाशकरं रहस्यम्। तेषामखण्डशशिरम्यसुकांतिभाजां स्वप्नोऽपि नो भवति कालभयं नराणाम् ॥३७३॥

इडा गंगेति विज्ञेया पिंगला यमुना नदी।
मध्ये सरस्वतीं विद्य त्प्रयागादिसमस्तथा ॥ ३७४॥

आदौ साधनम ख्यातं सद्यः प्रत्ययकारकम्।
बद्धपद्मासनो योगी बन्धयेदुड्डियानकम् ॥ ३७५॥

जिन मनुष्यों के हृदयमें अनादि, अद्वितीय, अन्धकार के समूह का नाश करनेवाला और गोपनीय तेज (शिवस्वरोदय का ज्ञान) आता है, अखण्ड चन्द्रमा के तुल्य रमणीय है कान्ति जिसकी ऐसे उन मनुष्यों को स्वप्न में भी काल का डर नहीं होता। इडा नाड़ी गङ्गा और पिंगला नाड़ी यमुना नदी जाननी और मध्य की (सुषुम्ना) सरस्वती—इन तीन नाड़ियों के संगम को प्रयाग के समान समझना। पहले साधन को ही शीघ्र प्रतीति का कारण कहा है इससे योगी पद्मासन को बाँधकर उडियानक नाम आसन को बांधे अर्थात् अपान को गति को ऊपर करके नाभिरंध्र के पास लावे ॥३७३-३७५॥

पूरकः कुम्भकश्चैव रेचकश्च तृतीयकः।
ज्ञातव्यो योगिभिर्नित्यं देहसंशुद्धिहेतवे॥३७६॥
पूरकः कुरुते वृद्धिं धातुसाम्यं तथैव च।
कुम्भके स्तम्भनं कुर्याज्जीवरक्षाविवर्द्धनम्॥३७७

योगी लोग अपने शरीर की भले प्रकार से शुद्धि के लिये पूरक, कुम्भक, रेचक—इन तीनों प्राणायामों को जाने। उन तीनों में पूरक प्राणायाम (बाहर की वायुको भी खींचना) वृष्टि में शरीर को सींचता है और सम्पूर्ण धातुओं को समान करता है और कुम्भक प्राणायाम (बाहर-भीतर की वायु को स्थिर रखना) शरीरकी धातुओं को स्तम्भन (जहाँ की तहाँ रखना) करता है और जीव की रक्षा को बढ़ाता है॥३७६-३७७॥

रेचको हरते पापं कुर्याद्योगपदं व्रजेत्।
पश्चात्संग्रामवत्तिष्ठेल्लयबन्धं च कारयेत्।३७८॥
कुम्भयेत्सहजं वायुं यथाशक्ति प्रकल्पयेत्।
रेचयेच्चन्द्रमार्गेण सूर्येणापूरयेत्सुधीः॥३७९॥

रेचक प्राणायाम (भीतर की हवा बाहर निकालना) पाप को हरता है, इस प्रकार जो प्राणायाम करता है वह योग पद को पाता है फिर जो योगी समान रूप से

टिकता है वह लयबंध को कर सकता है अर्थात् काल को वश में कर सकता है। स्वाभाविक वायु को अपनी शक्ति के अनुसार कुम्भक प्राणायाम से रोके, चन्द्रस्वर से रेचक करे और सूर्यस्वर से पूरक प्राणायामको बुद्धिमान मनुष्य करे ॥ ३७८–३७९ ॥

चन्द्र पिबति सूर्यश्च सूर्य पिबति चन्द्रमाः ।
अन्योन्यकालभावेन जीवेदाचन्द्रतारकम् ॥३८०
स्वीयांगे बहते नाडी तन्नाडीरोधनं कुरु ।
मुखबन्धमुञ्चन्वै पवनं जायते युवा ॥३८१॥

जिसके चन्द्रस्वर को सूर्यस्वर और सूर्यस्वर को चन्द्रस्वर परस्पर समय-समय पीवें वह चन्द्रमा और तारों की स्थिति पर्यन्त तक जीवित रहेगा। जो योगी अपने अङ्ग में चलती हुई नाड़ी को रोक कर और अपने मुख को बाँधकर मुँह से वायु को निकलने दे, वह योगी वृद्धावस्था से युवावस्था को पाता है ॥३८०–३८१॥

मुखनासाक्षिकर्णान्तान गुलीभिर्निरोधयेत् ।
तत्वोदयमितिज्ञेयं षण्मुखीकरणंप्रियम् ॥३८२॥
तस्य रूपं गतिः स्वादो मण्डलं लक्षणं त्विदम् ।
स वेत्ति मानवो लोके संसर्गादपि मार्गवित् ॥३८३

मुँह, नाक, आँख, कान—इनको अपनी अँगुलियों से रोके, इसी को तत्त्वोदय पराङ्मुखीकरण और प्रिय जानना। उसका रूप यह है कि वह योगी तत्त्वों का रूप, गति, स्वाद मंडल लक्षण इन सबको संसार में जानता है और तत्त्वों के हेलमेल में अलग अलग मार्ग को जान सकता है ॥ ३८२–३८३ ॥

निराशो निष्कलो योगी न किंचिदपि चिंतयेत्।
वासनामुन्मनां कृत्वा कालं जयति लीलया।३८४
विश्वस्य वेदिका शक्तिर्नेत्राभ्यां परिदृश्यते।
तत्रस्थं तु मनो यस्य याममात्रं भवेदिह ॥३८५॥
तस्यायुर्वर्धते नित्यं घटिकात्रयमानतः।
शिवेनोक्तं पुरा तन्त्रे सिद्धस्य गुणगह्वरे ॥३८६

आशारहित और शुद्धरूप योगी किसी वस्तुकी चिंता न करे और वासनाओं के त्याग से लीला (अनायास) से काल पर विजय पाता है। सब जगत् के जानने की शक्ति आँखों से दीखती है, उस शक्ति के लिये जिस योगी का मन एक प्रहरमात्र जमे, उस योगी की आयु नित्यप्रति तीन-तीन घटिका के हिसाब से बढ़ती है, यह बात गुणवान् सिद्धों के तन्त्रशास्त्र में शिवजी ने कही है ३८४-३८६

बद्ध्वा पद्मासनं ये गुदगतपवनं सन्निरुद्ध्याम्मु-
मुच्चैस्तं तस्यापानरन्ध्रक्रमजितमनिलं प्राणश-
क्त्या निरुद्ध्य एकीभूतं सुषुम्ना विवरमुपगतं
ब्रह्मरन्ध्रे च नीत्वा निक्षिप्याकाशमार्गं शिव
चरणरता यान्ति ते केऽपि धन्याः ॥३८७।
एतज्जानाति योगी य एतत्पठति नित्यशः।
सर्वदुःखविनिर्मुक्तो लभते वाञ्छितं फलम् ३८८

योगी पद्मासन को बाँध कर गुदा में स्थित वायु (अपान) को रोक कर उसे ऊँचे को ले जाँय और अपने रन्ध्र में जीते स्थिर हुए उसको प्राणशक्ति के साथ रोक कर दोनों की एकता करे, जब वे दोनों एक हो जाँय और सुषुम्ना नाड़ी के रन्ध्र में पहुँच जावे फिर ब्रह्मरंध्र में ले जाकर आकाशमार्ग में छोड़ दें, इस तरह शिवजी के चरणों में रत जो कोई योगी जाते (मरते) हैं वे धन्य हैं। जो योगी इसको समझता है और प्रतिदिन पढ़ता है वह सब दुःखों से रहित योगी वांछित फल पाता है।३८७-३८८।

स्वरज्ञानं नरे यत्र लक्ष्मी पदतले भवेत्।
सर्वत्र च शरीरेऽपि सुखं तस्य सदा भवेत्॥३८९

प्रणवः सर्ववेदानां ब्राह्मणे भास्करो यथा ।
मृत्युलोके तथा पूज्यः स्वरज्ञानी पुमानपि ॥३९०

जिस मनुष्य को स्वर का ज्ञान है उसके चरणों में लक्ष्मी है और उसके शरीर में तथा जहाँ वह जाय वहाँ उसको सुख प्राप्त होता है । सम्पूर्ण वेदों में जैसे ओंकार और ब्राह्मणों में जैसे सूर्य पूज्य है उसी प्रकार मृत्युलोक में स्वरज्ञानी मनुष्य भी पूज्य है ॥३८९–३९०॥

नाडीत्रयं विजानाति तत्वज्ञानं तथैव च ।
नैव तेन भवेतुल्यं लक्षकोटि रसायनम् । ३९१

एकाक्षरप्रदातारं नाडीभेदविवेचकम् । पृथिव्यां
नास्तितद्द्रव्यं यद्दत्वा चानृणी भवेत् ॥३९२॥

स्वरतत्वं तथा युद्धं देवि वश्यं स्त्रियस्तथा ।
गर्भाधानं च रोगश्च कलार्द्धं नैवमुच्यते । ३९३॥

जो पुरुष पूर्वोक्त तीनों नाड़ियों को जानता है और जिसको तत्व का ज्ञान है उसके समान लक्षकोटि रसायन नहीं है । नाड़ी भेद का विवेचन करने वाला जो एक अक्षर भी दे दे पृथ्वी में वह द्रव्य नहीं है जिसको देकर ऋनृणी हो जाय अर्थात् उसका बदला दे सके । स्वर का

तत्व युद्ध और स्त्रियों का वशीकरण गर्भाधान और रोग से सब आधी कला से इस तरह कहे जाते हैं।३६१-३६३।

एवं प्रवर्तितं लोके प्रसिद्धं सिद्धयोगिभिः।
चन्द्रार्कग्रहणे जाप्यं पठतां सिद्धिदायकम् ॥३६४
स्वस्थाने तु समासीनो निद्रां चाहारमल्पकम्।
चिन्तयेत्परमात्मान यो वेद स भविष्यति॥३६५

इस प्रकार यह स्वरोदय लोक में प्रवृत्त हुआ और योगीजनों ने प्रसिद्ध किया, इसको चन्द्र-सूर्य के ग्रहण में जो जपता है या पढ़ता है उसको सब सिद्धियाँ देता है। जो अपने स्थान पर बैठा रहे, निद्रा व भोजन कम करे और परमात्मा की चिन्ता करे तथा पहचाने वह मनुष्य स्वर का ज्ञानी हो जायगा ॥३६४–३६५॥

इति श्री उमा-महेश्वरसम्वादे भाषाटीकासहितं
शिवस्वरोदयज्ञान सम्पूर्णम्

मुद्रक— बाबू सोहनलाल गुप्ता, हिन्दी पुस्तकालय प्रेस मथुरा।

...विलास बड़ा—

भगवान श्रीकृष्ण की लीलाओं का पद्यानुवाद वर्णन किया है। यह पुस्तक श्रीब्रजवासीदासजी लिखित है। सचित्र सजिल्द पुस्तक का मूल्य ४रु.डा.ख.अ.

भक्तमाल भाषा— इसमें अनेक भक्तोंकी कथायें विस्तार से लिखी गई हैं। जब पाठक तथा श्रोतागण उनके चरित्र को पढ़ते हैं तब भगवान के प्रेम में विह्वल होकर आँसू बहाने लगते हैं। मूल्य ग्लेज कागज १० रु० रफ कागज ५ रु. डाक ख.माफ.

महाभारत भाषा बड़ा

यह मुर्दा दिलों में नया जीवन पैदा करने वाला ग्रंथ है। सोये हुये मानव समाज को जगाने वाला है। संपूर्ण १८ पर्व मोटा अक्षर बढ़िया कागज सुन्दर पक्की जिल्द चित्रों सहित ग्रंथका मूल्य १ रु.डाक खर्च माफ.

महाभारत सबलसिंह चौहान कृत

—यह पुस्तक सम्पूर्ण महाभारत की दोहा चौपाइयों में लिखी गई है। चार खण्ड सम्पूर्ण भाषा टीका सजिल्द पुस्तक मू० ८ रु.डाक ख १ रु.

महाभारत— (राधेश्याम की तर्ज में) यह पुस्तक राधेश्याम की तर्ज में लिखी गई है कथा वाचक इसकी कथा हारमोनियम तबला पर गाकर सुनाते हैं। २४ भागों में संपूर्ण जिल्द मू. १ रु. ८० नये पैसा डाक खर्च अ०

गीतासार संग्रह भाषा

उत्तरप्रदेश सरकारद्वारा स्वीकृत इस पुस्तक भगवान कृष्ण द्वारा कही समस्त गीता का सार है। ग्लेज कागज पर छपी मोटा अक्षर मूल्य १.२५ डाक खर्च ५० नये पैसे।

गरुड़ पुराण भा० टी०

मनुष्य की मृत्यु के बाद जो कथायें उसकी आत्माको शान्ती प्रदान करनेके लिए मृतक परिवार को सुनाई जाती हैं उसीका इस पुस्तक में सविस्तार बर्णन है। मूल्य ३.०० डाक खर्च अ०

पुरुषोत्तममास माहात्म्य भाषा टीका

मूल्य ३·०० मू० ३.०० डाक खर्चा ५० न.पै.

मंगानेका पता—हिन्दी पुस्तकालय, मथुरा।

रामायण गुटका भा. टी.

यह रामायण की कथा भा. टी. गुटका साइज में छापी गई है। यह सफरमें अति उपयोगी है। साइज ७॥ इञ्च लम्बा ५॥ इंच चौड़ा है। क्षेपक सहित टीकाकार पं० ज्वालाप्रसादजी शर्मा मूल्य ६) रु. डा ख.माफ।

विश्रामसागर—इस पुस्तक में श्रीमद्भागवत की कथा दोहा चौपाइयो में वर्णन की गई है। बाबा रघुनाथदास रामसनेही कृत मूल्य ८) रु.डाक व्यय २)

सुखसागर बड़ा— मोटा अक्षर बढ़िया कागज विशुद्ध छपाई साइज ११ इंच लम्बा व ७ इंच चौड़ा है। विलायती कपड़े की ठप्पेदार जिल्द चित्रों सहित मूल्य १२ रु०डा.ख.माफ

प्रेम सागर—यह श्रीमद्भागवत का दशम स्कन्ध लल्लूलाल जी कृत है। यह पुस्तक ब्रज भाषा में लिखी गई है। भगवान श्रीकृष्ण की रासलीला पढ़ने वालों को अवश्य मगाना चाहिये। मूल्य ४.०० रुपया।

राधेश्याम की तर्ज में

श्रीमद्भागवत इस पुस्तक में नन्द नन्दन भगवान वसुदेव नन्दन श्रीकृष्णका पावन चरित्र राधेश्याम की तर्ज में रोचकता पूर्वक वर्णन किया है। पुस्तक २० भागों में सम्पूर्ण हुई है। मूल्य सजिल्द पुस्तक का ६ रु. २५ न.पै. डाक खर्च १ रु०

मनुस्मृति भाषा टीका—यदि हमें अपनी उन्नति करनी है तो अपने धर्म ग्रंथों को भी अवश्य पढ़ना चाहिये। इसलिये प्रामाणिक भाषा शुद्ध मनुस्मृति का सम्पादन प्रकाशित किया है। पूरे ४०० पृष्ठ के सजिल्द ग्रंथ का मू० ४) डाक खर्च अ.।

[illegible]पुराण भाषा सम्पूर्ण ११ खण्ड इस महा ग्रन्थ में श्री शिवजी महाराज की संपूर्ण कथा सरल रोचक,तथा बहुत ही भावपूर्ण भाषा में लिखी गई है बड़ा.साइज,बढ़िया कागज,मोटा अक्षर सुन्दर जिल्दचित्रा सहित मूल्य १२ रु.डा.ख.माफ

मँगाने का पता—हिन्दी पुस्तकालय, मथुरा।